खंड 2
भारत में लोक सेवा

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 4 बदलते परिप्रेक्ष्य में लोक सेवाएँ

इकाई की रूपरेखा

4.0 उद्देश्य

4.1 प्रस्तावना

4.2 लोक सेवा का अर्थ

4.3 नौकरशाही का अर्थ

4.4 नौकरशाही के प्रकार

4.5 नौकरशाही की विशेषताएँ/लक्षण

4.6 नौकरशाही की भूमिका

4.7 नौकरशाही का बढ़ता हुआ महत्व

4.8 नौकरशाही के गुण तथा दोष

4.9 निष्कर्ष

4.10 शब्दावली

4.11 संदर्भ लेख

4.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

4.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप:

- लोक सेवा के अर्थ और विकास के बारे में जान सकेंगे;
- नौकरशाही के अर्थ और इसके विभिन्न प्रकारों/रूपों को बता सकेंगे;
- नौकरशाही के विभिन्न लक्षणों/विषेशताओं को समझ सकेंगे;
- नौकरशाही के गुणों और दोशों का वर्णन कर सकेंगे; और
- नौकरशाही के बढ़ते हुए कार्यों को उजागर कर सकेंगे।

4.1 प्रस्तावना

नौकरशाही प्रशासन में प्रायः प्रयोग की जाने वाली शब्दावली है। परंतु प्रशासनिक विचारकों एवं विद्यार्थियों में इस बात पर एकमत का अभाव है कि नौकरशाही और लोक सेवा एक–दूसरे का पर्यायवाची हैं या नहीं। कुछ लोगों की राय में दोनों समान हैं, जबकि दूसरों के लिए नौकरशाही आबंटित या निर्धारित कार्यों को सम्पन्न करने वाला अधिकारियों का एक समूह है। लोक सेवा के लिए सरकारी प्रशासन का विभिन्न स्तरों पर प्रभावी रूप से क्रियान्वित करना माना जाता है। इस प्रकार, लोक सेवा को विभिन्न कार्यों को पूरा करने का मुख्य यंत्र माना जाता है। नौकरशाही संगठन का एक आवश्यक भाग है। प्रत्येक व्यक्ति चाहे वह छोटा हो या बड़ा किसी न किसी रूप में नौकरशाही संरचना से जुड़ा हुआ है। विगत वर्शों में नौकरशाही की तीव्र आलोचना हुई है। अधिकांश व्यक्ति इसे नकारात्मक संदर्भ में

*यह इकाई बी.पी.ए.ई–104, खंड 2 से ली गई है।

देखते हैं। फिर भी, इसकी कई स्पष्ट कमियों और उज़ागर बुराइयों के बावजूद कोई भी संगठन – सरकारी, सार्वजनिक या निजी – नौकरशाही संरचना के बिना नहीं चल पाया है। इसके विपरीत, सभी बड़ी संस्थाओं एवं संगठनों, उदाहरण के लिए शिक्षण संस्थाओं, सेवा अभिकरणों, शोध निकायों, धर्मार्थ न्यासों आदि ने नौकरशाही संरचना को अपने अस्तित्व के लिए महत्वपूर्ण अंग बनाया है। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि नौकरशाही में अपने बने रहने और जीवित रहने की मजबूत क्षमता है। यहाँ तक कि आलोचक और विरोधी भी यह स्वीकार करते हैं कि नौकरशाही संरचना को समाप्त करने की अपेक्षा इसे अपनाने या कायम रखने में ही लाभ है।

इसलिए, हमें इस तथ्य का विश्लेषण करना चाहिए कि नौकरशाही क्यों पूर्णतया आवश्यक हो गई है? इस प्रकार, लोक सेवा का अर्थ, लोक सेवा का वर्षों से अन्य और आधार, नौकरशाही का अर्थ और उपयोगिता, इसका बढ़ता हुआ महत्व, इसकी विशेषता, कार्य, गुण और दोषों का बारीकी से अध्ययन करना लाभदायक होगा। इस इकाई में आधुनिक नौकरशाही के परिप्रेक्ष्य में लोक सेवाओं पर प्रकाश डाला जायेगा।

4.2 लोक सेवा का अर्थ

लोक सेवा सभी प्रकार से सरकार का एक महत्वपूर्ण भाग है। लोक सेवा की योग्यता तथा क्षमता ही एक कार्यकुशल और प्रभावी सरकार का आधार होती है। इसके महत्व का अंदाजा दो भागों से लगाया जा सकता है। प्रथम, राजनीतिक व्यवस्था में परिवर्तन लाने और उसका प्रबंध करने के लिए, और द्वितीय, ऐसे किन्हीं परिवर्तनों को रोकने के लिए जिसमें समाज तथा विशेष रूप से व्यवस्था किसी नुकसानदेह स्थिति में आएँ। अलग–अलग विद्वानों ने लोक सेवा को अलग विचार से देखा है। हरमन फाईनर ने लोक सेवाओं का अर्थ ऐसे "अधिकारी समूह से लिया है, जो स्थाई, वैतनिक तथा कौशल युक्त होता है।" इसके महत्व पर प्रकाश डालते हुए हरमन फाईनर ने कहा है कि "आधुनिक राज्य में लोक सेवा का कार्य केवल मात्र सरकार का सुधार करना ही नही है, वास्तव में इसके बिना सरकार ही असंभव होगी"। ई.एन. ग्लैडन के शब्दों में "लोक सेवा उस महत्वपूर्ण सरकारी संस्था का नाम है जिसमें राज्य के केन्द्रीय प्रशासन के कर्मचारी शामिल हैं। इससे भी अधिक यह आधुनिक लोकतंत्र की सफलता के लिए आवश्यक आत्मा या मूल अर्थ के रूप में ली जाती है, जो समाज सेवा में अपना जीवन समर्पित करते हैं।" इसकी आवश्यकता एवं प्रभावशीलता पर, रामसे म्योर (मोहित भट्टाचार्य द्वारा उद्धृत) ने कहा है कि "लोक सेवा हमारी व्यवस्था का प्रभावी और क्रियान्वयक भाग बन गई है। नौकरशाही, स्थाई लोक सेवा की शक्ति को न केवल प्रशासन में अपितु विविध और वित्त के क्षेत्र में भी देखा जा सकता है। इसका काम न केवल कानूनों को लागू करना है, यह काफी हद तक उनका निर्माण भी करती है; यह केवल करों से प्राप्त धनराशि को खर्च ही नही करती, यह काफी हद तक यह भी निश्चित करती है कि कितना धन इकट्ठा करना है और इसे कैसे पूरा (इकट्ठा) करना है।"

लम्बे समय तक लोक सेवाएँ, विकसित देशों में भी, उन लोगों के पास थी जो व्यावसायिक रूप से प्रशिक्षित नहीं थे और इस दृष्टिकोण से नौसिखिए थे। लोक सेवा का जीवन सरकारों के उत्थान या पतन पर निर्भर था। आधुनिक समय में प्रशीया केवल ऐसा देश था जहाँ पर लोक सेवाओं में भर्ती के लिए निर्धारित तंत्र थे। कुछ अर्थ में, चीन में भी स्थाई लोक सेवाओं के कुछ प्रकार या रूप थे। उदाहरण के लिए उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य तक ब्रिटेन में कोई स्थाई लोक सेवा नहीं थी। अमेरिका में इसी प्रकार ब्रिटेन की तरह ही स्थिति उन्नीसवीं शताब्दी के अंत तक रही।

एक संगठित रूप में लोक सेवाओं की संरचना ने भारत में ब्रिटिश शासन के दौरान गति प्राप्त की। भारत में औपनिवेशक काल में एवं स्वतंत्रता के बाद में भी इस बाबत अनेकों कदम उठाए गए। लोक सेवाओं की संरचना से सम्बन्धित प्रगति की काफी विस्तार से चर्चा सातवीं इकाई में की गई है। लोक सेवाओं में वे अधिकारी शामिल हैं जो देश में विभिन्न स्तरों पर सामान्य प्रकार के प्रशासनिक कार्य सम्पन्न करते हैं। केन्द्र और राज्य दोनों स्तरों पर लोक सेवा आयोगों द्वारा इनकी नियुक्तियाँ की जाती हैं।

इस प्रकार लोकतांत्रिक शासन में लोक सेवाएँ सरकारी तंत्र का एक महत्वपूर्ण भाग होती हैं। यह ऐसे गैर–राजनीतिक और गैर–चुने हुए अधिकारियों का नाम है जो उन कार्यों को पूरा करते हैं, जिन्हें राजनीतिक कार्यपालिका द्वारा बनाए गए संपूर्ण नीतिगत ढाँचे के अंतर्गत निश्चित या निर्धारित किया गया हो। लोक सेवाओं के अराजनीतिक स्वभाव के अनुरूप इसके सदस्यों से यह आशा की जाती है कि वे पूर्ण लगन, प्रतिबद्धता एवं समर्पण के साथ कार्य करेंगे।

पिछले बहुत से वर्षों में लोक सेवाओं के महत्व में अत्यधिक वृद्धि हुई है। इसका कार्य न केवल नीतियों और कार्यक्रमों को लागू करना है, बल्कि नीतियों के निर्माण में राजनीतिक कार्यपालिका की सहायता करना भी है। यह सशक्त रूप से महसूस किया जाता है कि सरकार कुछ समय तक विधानपालिका के बिना कार्य चला सकती है, लेकिन यह बिना लोक सेवा के कार्य नहीं संपन्न कर सकती।

4.3 नौकरशाही का अर्थ

नौकरशाही उतनी ही पुरानी है जितना कि सरकार और प्रषासन है। यद्यपि नौकरशाही की अवधारणा अधिकांशतः उन समाजशास्त्रियों द्वारा विकसित की गई जिन्होंने सामान्यतः वर्णनात्मक, विद्वतापूर्ण और पक्षपातरहित दृष्टिकोण लेकर इसे परिभाषित किया, लेकिन इस शब्द को परिभाषित करना कठिन है। अलग–अलग लोगों ने इसका अर्थ अलग–अलग लगाया है। नौकरशाही की लगभग उतनी ही परिभाषाएँ हैं जितने कि इस विषय के लेखक एवं विद्वान हैं जिन्होंने नौकरशाही के विभिन्न आयामों के अध्ययन का प्रयास किया है। इस प्रकार नौकरशाही की अवधारणा की कोई एकदम सही और स्पष्ट शब्द व्याख्या है ही नहीं। नौकरशाही शब्द विभिन्न बातों पर प्रकाश डालने के लिए अलग–अलग अर्थों को संबोधित करता है।

एक अधिक पारम्परिक रूप में नौकरशाही शब्द लैटिन भाषा के 'ब्यूरो' शब्द जिसका अर्थ है "मेज" तथा ग्रीक शब्द क्रैसी जिसका अर्थ है 'शासन' से मिलकर बना है। इस प्रकार इसका तात्पर्य मेज का शासन या मेज सरकार से है। ब्यूरोक्रैसी (नौकरशाही) शब्द की रचना सर्वप्रथम 1745 में एक फ्रांसीसी विद्वान, विन्सेंट डि गौरनी, ने की थी।

कुछ लोग इसे कुशलता तो कुछ इसे अकुशलता के समतुल्य मानते हैं। कुछ लोग इसे लोक सेवा का पर्यायवाची मानते हैं तो दूसरे लोग इसे अधिकारी समूह के रूप में देखते हैं। किन्तु मूलतः नौकरशाही कार्यों और व्यक्तियों का एक ऐसा व्यवस्थित संगठन है जो इन सामूहिक प्रयत्नों या प्रयासों के वांछित लक्ष्यों या उद्देश्यों को सर्वाधिक प्रभावी ढंग से प्राप्त करता है। यह अनेकों अंतर्संबंधित कार्यालयों में संगठित नियंत्रित एक प्रशासनिक व्यवस्था है।

जे.एस. मिल के अनुसार नौकरशाही का अर्थ समाज में सरकार के व्यावसायिक रूप से दक्ष प्रशासकों से है। लास्की के रूप में नौकरशाही एक सरकारी व्यवस्था में एक अधिकारियों का

शासन है। हरमन फाईनर ने नौकरशाही को प्रशासकों या अधिकारियों द्वारा शासन के रूप में वर्णित किया है। नौकरशाही का वर्णन करते हुए मोस्का कहते हैं कि यह प्रशासनिक अभिजनों का एक वर्ग है जिसका शासन अंतिम या पूर्ण होता है। मिशेल ने नौकरशाही की अवधारणा को और विस्तृत करते हुए कहा है कि इसमें सरकारी और गैर–सरकारी अभिकरणों जैसे राजनीतिक दल के वैतनिक कर्मचारी शामिल होते हैं। मार्शल ई. डिमॉक नौकरशाही को समाज में बड़े स्तर के संगठनों एवं संस्थाओं से जोड़कर देखते हैं। उसके अनुसार "नौकरशाही समाज की वह अवस्था है जिनमें संस्थाएँ व्यक्ति एवं साधारण पारिवारिक सम्बन्धों को आच्छादित करती है; विकास की वह स्थिति है जिसमें श्रम–विभाजन, विशेषीकरण, संगठन, पद्सोपान, योजना और व्यक्तियों के बड़े समूहों को, स्वयं या अनचाहे तरीकों से नियंत्रित करना (रेजीमेंटेशन) प्रति दिन की बात है। नौकरशाही वृहत रूप में केवल संस्थावाद का नाम है। यह किसी संस्था के खून में मिलाया हुआ कोई बाहरी पदार्थ नहीं है, यह केवल मात्र सभी में पाई जाने वाली विशेषताओं का बढ़ा हुआ रूप है। यह केवल उस अंश का प्रश्न है जिसके अंदर अवयवों के मिश्रण और उन पर तुलनात्मक रूप से (रेलेटिवली) दिया जाने वाला बल है।"

मैक्स वेबर, एक जर्मन समाजशास्त्री का नौकरशाही की अवधारणा की व्याख्याओं के संदर्भ में एक केन्द्रीय स्थान है। उसने नौकरशाही के आदर्श रूप का वर्णन किया है। नौकरशाही का आदर्श प्रारूप (नौरमेटिव मॉडल) की संरचना पर बल देता है, जबकि नौकरशाही का व्यवहारवादी प्रारूप, अर्थात् नौकरशाही आधुनिक परिप्रेक्ष्य संगठन में व्यवहारात्मक और कार्यात्मक आधारों या पक्षों (पैटर्न) पर बल देता है। यदि हम नौकरशाही के संरचनावादी लक्षणों जैसे पद्सोपान, कार्य–विभाजन, नियम–प्रणाली आदि का अवलोकन करें तो नौकरशाही मूल्य–निरपेक्ष लगती है। व्यवहारवादी दृष्टिकोण से, जबकि यह कुछ विशेषताओं जैसे वस्तुनिष्ठता, विवेकशीलता, अवैयक्तिता, नियमोन्मुखता आदि को इंगित या प्रदर्शित करती है, नौकरशाही कुछ कार्यात्मक अर्थात् सकारात्मक तथा साथ ही कुछ विकासात्मक अर्थात् नकारात्मक लक्षणों को प्रकट करती है। लक्ष्यों की प्राप्ति की दृष्टि से नौकरशाही को एक ऐसी संगठन–संरचना समझा जा सकता है जो प्रशासन की कार्यकुशलता को अधिकतम स्तर तक बढ़ाती है।

4.4 नौकरशाही के प्रकार

नौकरशाही सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक तथा राजनीतिक कारकों से प्रभावित होती है। परिणामस्वरूप, इतिहास के विभिन्न चरणों में इसके कई स्वरूप एवं रूप देखने में आए हैं। फ्रिट्ज मॉर्सटीन मार्क्स ने नौकरशाही को निम्न चार भागों में बाँटा है:

1) अभिभावक / संरक्षक नौकरशाही

2) जातिगत नौकरशाही

3) संरक्षण नौकरशाही

4) योग्यता आधारित नौकरशाही

अभिभावक नौकरशाही चीन में सुंग काल के प्रारंभ (960 ईसवी पूर्व) तथा रूस में 1640 से 1740 के बीच प्रचलित थी। नौकरशाही उन अभिभावकों से बनी थी जिनका चयन उनकी शिक्षा और अनुभव के आधार पर किया जाता था और तत्पश्चात् उन्हें सही व्यवहार या संचालन में प्रशिक्षित किया जाता था। वे न्याय तथा समाज के कल्याण के संरक्षक समझे

जाते थे। मार्क्स ने इसे विद्वत अधिकारीजन के रूप में परिभाषित किया है जो प्राचीन साहित्य के अनुरूप सही संपादन/व्यवहार में प्रशिक्षित होते थे।

जातिगत नौकरशाही का वर्गीय आधार होता है। मार्क्स के अनुसार इसका उदय उन लोगों के वर्गों के साथ सम्बन्धों से होता है जो नियंत्रण करने की स्थितियों में होते हैं। ऐसी नौकरशाही में भर्ती एक वर्ग विशेष के व्यक्तियों में से होती है। नौकरशाही का यह रूप अल्पजनाधिपत्य (ऑलीगार्कीकरण) राजनीतिक व्यवस्था में व्यापक रूप से प्रचलित होता है। इन व्यवस्थाओं में उच्च वर्गों या उच्च जातियों से सम्बन्धित लोग ही लोक सेवक बन सकते थे। उदाहरण के लिए, प्राचीन भारत में केवल ब्राह्मण और क्षत्रीय ही उच्च अधिकारी बन सकते थे। मार्क्स के कथनानुसार, इस प्रकार की नौकरशाही व्यवस्था में उच्च पदों से सम्बन्धित योग्यताएँ ऐसे निर्धारित की जाती हैं कि वे वर्गीय वरीयता बन जाती हैं। यह ठीक उसी प्रकार है जैसा कि विलोवी ने इंग्लैंड के संदर्भ में वर्णन करते हुए कहा है कि वहाँ कुछ समय पूर्व तक लोक सेवा के पदों में अभिजात्य वर्गों को प्राथमिकता दी जाती थी।

संरक्षण नौकरशाही का दूसरा नाम लूट–खसोट पद्धति है। संयुक्त राज्य अमेरिका इसका परम्परावादी या पुराना घर रहा है, यद्यपि उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य तक ब्रिटेन में भी इसका बोलबाला रहा है, जहाँ पर इसकी सहायता से सार्वजनिक पद व्यक्तिगत पक्षपात या राजनीतिक इनाम के रूप में बाँटे जाते थे। यहाँ यह ध्यान देना रुचिकर होगा कि इस व्यवस्था ने अमेरिका और ब्रिटेन ने अलग–अलग रूपों में कार्य किया या स्वयं को प्रज्वलित किया।

ब्रिटेन में संरक्षण नौकरशाही का वहाँ पर अभिजात्य सामाजिक व्यवस्था के समानान्तर विकास हुआ और उसने अपने उद्देश्य में सफलता भी प्राप्त की। इसके विपरीत, संयुक्त राज्य अमेरिका में इस प्रणाली ने बिल्कुल भिन्न रूप में कार्य किया था और पद या नौकरियाँ विजयी राजनीतिक दल को लूट के माल की तरह बाँटे जाते थे। संरक्षण नौकरशाही की इस व्यवस्था में तकनीकी क्षमता का अभाव, शिथिल अनुशासन, छिपाया हुआ या प्रच्छन्न लालच, अनियमित कार्य पद्धति, पक्षपातपूर्व दृष्टिकोण तथा सेवाभाव का अभाव, आदि दोषों के कारण खूब आलोचना या भर्त्सना हुई।

'योग्यता नौकरशाही' का आधार लोक सेवक के गुण होते हैं तथा इसका उद्देश्य लोक सेवा की कार्यकुशलता है। इसका लक्ष्य प्रतिभा पर आधारित आजीविका होता है। इसमें यह प्रयत्न किया जाता है कि लोक सेवा में ऐसे योग्यतम व्यक्तियों का चयन हो जहाँ योग्यताओं की जाँच बिना पक्षपात या भेदभाव के या वस्तुनिष्ठ मापदंडों के आधार पर हो। आधुनिक समय में सभी देशों में इस पद्धति का प्रचलन है। लोक सेवा में नियुक्ति अब वर्गीय आधार पर नहीं की जाती है और न ही अब यह कोई उपहार या पक्षपात के रूप में देखा जाता हैं अब लोक सेवक जनता का स्व–नियुक्त अभिभावक नहीं होता है। आधुनिक लोकतंत्र में सरकारी कर्मचारी वास्तव में जनता की सेवा में संलग्न अधिकारी होता है और उसकी नियुक्ति निर्धारित योग्यताओं की निष्पक्ष परीक्षा के आधार पर की जाती है। वह अपनी नौकरी या काम के लिए अपने स्वयं के कठिन परिश्रम और प्रतिभा के अतिरिक्त किसी का ऋणी नहीं होता है।

4.5 नौकरशाही की विशेषताएँ/लक्षण

नौकरशाही की अवधारणा का पूर्णतः विकास मैक्स वैबर ने किया है। वैबर के विश्लेषण के अनुसार नौकरशाही का सम्बन्ध सामूहिक गतिविधियों के विवेकीकरण की समाजशास्त्रीय

अवधारणा से है।

वैबर के अनुसार सत्ता के 3 रूप हैं और वे हैं – परम्परावादी सत्ता, चमत्कारिक सत्ता और कानूनी–तार्किक सत्ता।

वैबर के अनुसार नौकरशाही आधुनिक जटिल समाज की संरचना के लिए महत्वपूर्ण है चाहे उसका राजनीतिक रूप पूँजीवादी हो या समाजवादी। यह संगठन की उस संरचना या रूप का वर्णन करती है जिसमें कर्मचारियों के व्यवहार को पूर्व निर्धारित किया जा सके। संगठन के नौकरशाही प्रारूप के अंतर्गत कुछ संरचनात्मक कार्यविधियाँ या विशेषताएँ अन्तर्निहित होती हैं:

क) लक्ष्यों या उद्देश्यों की पूर्ति के लिए सभी आवश्यक कार्यों को विशेषीकृत कार्यों में बाँट दिया जाता है जिससे संगठन में विशेषीकरण और कार्यविभाजन सुनिश्चित हो सकें।

ख) संगठन में एकरूपता एवं समन्वय सुनिश्चित करने के लिए प्रत्येक कार्य पूर्व निर्धारित एवं निश्चित नियमों के अनुसार सम्पन्न किया जाता है।

ग) संगठन में प्रत्येक सदस्य उसके तथा उसके अधीनस्थों के कार्यों के लिए एक उच्च अधिकारी के प्रति जिम्मेदार होता है। इस प्रकार, संगठन में पद सोपान पर बल दिया जाता है।

घ) प्रत्येक कर्मचारी या अधिकारी अपने कार्यालय के कामकाज को अवैयक्तिक तथा औपचारिक तरीके से संपादित करता है।

ङ) नियुक्ति या रोजगार तकनीकी योग्यताओं पर आधारित होता है तथा उसे मनमाने रूप से सेवा से हटाने के विरुद्ध सुरक्षा प्रदान की जाती है। पदोन्नति सेवा में वरिष्ठता तथा योग्यता के आधार पर की जाती है।

वैबर का नौकरशाही प्रतिमान सामाजिक शोध क्षेत्र में नौकरशाही की वास्तविकताओं का अध्ययन करने के लिए मार्गदर्शन प्रदान करता है। वैबर के नौकरशाही प्रतिमान को एक आदर्श रूप या शास्त्रीय प्रतिमान माना गया है। किसी संगठन में इस नौकरशाही प्रतिमान की जितनी अधिक विषेशताएँ संगठन में मौजूद होती हैं उतना ही उसे नौकरशाही के आदर्श रूप वाला माना जाता है। वैबर के इस सिद्धान्त या प्रतिमान से एक ओर संरचनात्मक और दूसरी तरफ व्यवहारात्मक विषेशताओं का पता लगाया जा सकता है। संरचनात्मक रूप से संगठन के नौकरशाही रूप में निम्नलिखित विशेषताएँ पाई जाती हैं:

श्रम विभाजन – संगठन के संपूर्ण कार्य को विशेषीकृत कार्यों में बाँट दिया जाता है।

पद–सोपान – नौकरशाही संरचना पदसोपानात्मक होती है और सत्ता की मात्रा या सीमा पदसोपान के अंतर्गत स्तरों द्वारा निर्धारित रहती है।

नियमों की व्यवस्था – कर्मचारियों के कर्त्तव्य और अधिकार तथा कार्य करने की पद्धति स्पष्ट रूप से निर्धारित नियमों द्वारा तय या प्रशासित होते हैं। ऐसा कहा गया है कि नियमों का पालन स्वेच्छाचारिता को रोकता है और कार्यकुशलता को बढ़ाता है।

कार्य विशेषीकरण – संगठन में प्रत्येक कर्मचारी की भूमिका उसके कार्य विशेष के वर्णन के साथ स्पष्ट रूप से निश्चित कर दी जाती है। संगठन की प्रत्येक कर्मचारी से अपेक्षाएँ उसके निर्धारित कार्य तक ही सीमित होती हैं।

नौकरशाही की व्यवहारात्मक विशेषताओं का वर्णन निम्नलिखित रूप में किया जा सकता है:

विवेकषीलता या तार्किकता : नौकरशाही संगठन के तार्किक रूप या विवेकशील रूप का प्रतिनिधित्व करती है। निर्णय ठोस प्रमाणों के आधार पर लिए जाते हैं, किसी निर्णय पर पहुँचने से पहले विकल्पों पर निश्पक्षता से विचार किया जाता है।

अवैयक्तिता : नौकरशाही संगठन में किसी भी प्रकार की अतार्किक या विवेकहीन भावनाओं के लिए कोई स्थान नहीं है। कार्य–निष्पादन में व्यक्तिगत पसंद या नापसंद को कोई महत्व नहीं दिया जाता है। आधिकारिक कामकाज का निपटान बिना किसी राजनीतिक या व्यक्तिगत पक्षपात के किया जाता है। इस प्रकार नौकरशाही एक यंत्रवत् व्यवस्था है जो उच्चस्तीय अवैयक्तिता से युक्त होती है।

नियमोन्मुखीकरण: संगठन में अवैयक्तिता को उन नियमों एवं प्रक्रियाओं को निर्मित्त और निर्धारित कर स्थापित किया जाता है जो कार्यों को करने के तरीके निष्चित करते हैं। कर्मचारी अपने कर्त्तव्यों के निर्वहन में इन नियमों का कठोरता से पालन करते हैं।

तटस्थता: अवैयक्तिता के एक पहलू के रूप में नौकरशाही की यह विशेषता एक निश्पक्ष सोच या विचार को इंगित करती है, अर्थात् नौकरशाही किसी भी प्रकार के राजनीतिक शासन के बिना उनके साथ जुड़े या संबद्ध किए निश्पक्षता से सेवा करती है। इसकी प्रतिबद्धता किसी अन्य मूल्य के साथ न होकर केवल अपने कार्य के प्रति होती है।

नौकरशाही की ऐसी सकारात्मक व्यवहारवादी विशेषताओं के विपरीत, नौकरशाही के कुछ नकारात्मक और विकारात्मक लक्षण भी हैं। जो इस प्रकार हैं : (क) कार्यों में टालमटोल; (ख) लाल फीताशाही; (ग) सत्ता–प्रत्यायोजन में आनाकानी; (घ) अत्यधिक वस्तुनिष्ठता; (ड) नियमों और विनियमों का कठोरता से पालन; (च) कठोरता या अनम्यता; (छ) लोकप्रिय माँगों और आकाक्षाओं के प्रति उदासीन; (ज) स्व–विस्तार और हितपूर्ति की प्रवृत्ति; (झ) पुरातनवादी विचारधारा; (ण) पूर्व–दृष्टांतों से चिपके रहना; (ट) उत्तरदायित्व का विवर्तन; (ठ) प्रशासनिक व्यवहार में मानकीय तत्वों की उपेक्षा; (ड) घमण्ड आदि। भाग 4.7 में हम नौकरशाही के गुणों तथा दोषों की विस्तारपूर्वक चर्चा करेंगे।

बोध प्रश्न 1

टिप्पणी: i) अपने उत्तरों के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ii) इकाई के अंत में दिए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

1) नौकरशाही से आप क्या समझते हैं?

.....

.....

.....

.....

2) नौकरशाही के विभिन्न प्रकारों या रूपों को बताइए।

.....

.....

4.6 नौकरशाही की भूमिका

किसी देश में विकास एवं अभिवृद्धि लाने और उसे कायम रखने में नौकरशाही की भूमिका अति महत्वपूर्ण है। यह लगभग सार्वभौमिक रूप से अपेक्षा की जाती है कि नौकरशाही का गठन और स्वरूप इस प्रकार हो जिससे वह स्वयं के बाहर से नीति नेतृत्व कर स्वेच्छापूर्वक और प्रभावी ढंग से आदर करे या उत्तर दे। नौकरशाही विभिन्न राजनीतिक सत्ताओं अथवा सरकारों के अंतर्गत एक ही साथ समानताएँ और असमानताएँ प्रदर्शित करती है। फैरल हैडी के कथनानुसार "नौकरशाही मूलतः कार्यों को गति देने का यंत्र है, इसे अभिकर्त्ता की भूमिका निभानी चाहिए न कि स्वयं मालिक की।"

लेकिन हम इस बात पर बल नहीं दे सकते हैं कि नौकरशाही नीति–निर्धारण तथा राजनीतिक प्रक्रिया में शामिल हुए बिना केवल यंत्रवत् भूमिका ही निभा सकती है या निभानी चाहिए। वास्तव में देखा जाए तो नौकरशाही के बारे में चिंता का मुख्य कारण इसकी अपनी मूल भूमिका से भटकर राजनीतिक व्यवस्था में सत्ता का प्राथमिक और अधिकाधिक उपभोग करना है। ला पालोम्बरा ने अनुभव किया है कि विकासशील राष्ट्रों में जहाँ पर नौकरशाही शक्ति का प्रमुख केन्द्र है तथा जहाँ नीतियों के क्रियान्वयन के अतिरिक्त राष्ट्रीय विकास के क्षेत्र में महत्वपूर्ण निर्णय, नियमों के निर्माण और क्रियान्वयन में नौकरशाही प्राधिकारयुक्त भूमिका का निर्वाह करती है वहाँ इसे कार्यों को गतिशील बनाने वाली यंत्रवत भूमिका तक सीमित किया जाना बहुत कठिन कार्य है। इससे परिणामस्वरूप सर्वाधिक शक्तिशाली या अनियंत्रित नौकरशाही का उदय होता है।

बर्नार्ड ब्राउन एवं मिल्टन ऐसमन विकासशील शासन तंत्रों में प्रशासन की केन्द्रीय स्थिति को स्वीकार करते हुए इसे कमजोर करने की अपेक्षा और मजबूत बनाने का पक्ष लेते हैं।

इस प्रकार नौकरशाही प्रमुख रूप से सरकार का यंत्र है और इसके क्रियान्वयन उद्देश्यों के लिए एक सहायक एवं आवश्यक उपकरण होती है।

नौकरशाही अपनी भर्ती, प्रशिक्षण, क्रियाविधि और संस्कृति से राजनीतिज्ञों के रूप में भूमिका निभाने के स्थान पर राजनीतिज्ञों की सलाहकार की भूमिका के लिए सर्वाधिक सक्षम और योग्य है। किसी भी लोकतांत्रिक व्यवस्था में, जहाँ पर राजनीतिक दल जनता के बहुमत का समर्थन प्राप्त कर शासन करने का अधिकार प्राप्त करते हैं, वहाँ पर राजनीतिक नेता लोगों की माँगों और आकांक्षाओं को पूरा करते हैं, वे राष्ट्र की इच्छा को प्रतिबिम्बित करते हैं। अतः जनप्रतिनिधित्व करने वाले लोग ही उनके भले के लिए या उनकी ओर से बात कर सकते हैं। इस प्रकार नौकरशाही को व्यापक स्तर की राष्ट्रीय नीतियों के निर्धारण में कोई सर्वाधिकार और सर्वोच्चता प्राप्त नहीं है। वे ज्यादा से ज्यादा समय–समय पर आवश्यकता पड़ने पर राजनीतिक नीति–निर्माताओं को नीतियों को परिभाषित करने और सुधार करने में अपनी व्यावसायिक या तकनीकी सलाह एवं सहायता प्रदान करते हैं। सर्वाधिक सुनिश्चितता के साथ यह कहा जा सकता है कि वे इन नीतियों के क्रियान्वयन में और इन नीतियों के कुल संरचना के भीतर निर्णय लेने में विशिष्ट महत्व की भूमिका निभाते हैं।

सामान्य परिस्थितियों में, प्रशासक, निर्देशों के अंतर्गत कार्य करने की कक्षा में व्यावसायिक रूप से प्रशिक्षित होने के कारण नीति निर्माण की तकनीक में विशेषज्ञ हो जाते हैं। परंतु,

अन्यथा, जब सामान्य प्रशासनिक प्रक्रियाओं में गतिरोध आ जाते हैं या अनिश्चितता पैदा हो जाती है अर्थात् आपातकाल के समय में राज नेताओं के आदेशों एवं निर्देशों की तरफ देखते हैं। कानून की क्रियान्विति, कानून की व्याख्या तथा कानूनी विवाद का निपटारा ऐसे कार्य हैं जिन्हें प्रशासकों द्वारा अच्छे प्रकार से संपादित किया जाता है।

राजनेता स्थाई रूप से सत्ता में नहीं रहते क्योंकि समयबद्ध चुनावी प्रक्रिया के माध्यम से वे आते–जाते रहते हैं। राजनीतिक कार्यपालिका अस्थाई स्वामी या शासक होते हैं जबकि प्रषासक राज्य के स्थाई कर्मचारी होते हैं। उनका चयन उनकी श्रेष्ठ योग्यता, ज्ञान, व्यावसायिक क्षमता, तकनीकी ज्ञान, अनुभव तथा विषेशज्ञता के आधार पर होता है। लक्ष्यों की प्राप्ति करना उनका प्रथम कर्त्तव्य है। प्रशासकों की भूमिका सामाजिक, राजनीतिक तथा आर्थिक विषयों से सम्बन्धित कानूनों के निर्माण के बाद ही प्रारंभ होती है। इन कानूनों के क्रियान्वयन में जो भी अन्य आगे के सम्बन्ध प्रत्यायोजित विधान–निर्णय के अंतर्गत नियम और विनियम बनाने से ही या आवश्यक निर्देश व मार्गदर्शिकाएँ जारी करने से सम्बन्धित, नौकरशाही यह कार्य भली भांति पूरा करती है। निर्णय लेने और निर्णयों को क्रियान्वित करने सम्बन्धी गतिविधियों के माध्यम से नौकरशाही प्रशासनिक कार्यकुशलता आसानी से प्राप्त कर लेती है।

यदि नौकरशाही की आलोचना प्रायः प्रशासनिक अकुशलता, इसकी कमियाँ, सुस्ती परम्परावाद, नकारात्मकता, लालफीताशाही आदि के कारण की जाती है, तो वहाँ पर सामाजिक–आर्थिक विकास और प्रगति संदर्भ में सभी उपलब्धियों के लिए प्रशंसा भी की जानी चाहिए।

इसमें कोई संदेह नहीं कि नौकरषाही की परम्परागत "कानूनी–बौद्धिक" अवधारणा बदल चुकी है। जैसा कि पहले विवेचन किया गया है, अब नौकरशाही केवल मात्र यंत्र की भूमिका नहीं निभाती जो किसी भी प्रकार के परिवर्तनों से अप्रभावित और बेखबर केवल आदेशों की प्रतीक्षा करती रहे। यह कार्यों के क्रियान्वयन में भावनात्मक और मनोवैज्ञानिक रूप से युक्त होकर कार्य करती है। नीति–निर्माण तथा नीति–क्रियान्वयन के बीच पुराना अंतर या भेद और स्पष्ट कठोर विभाजन तेजी से समाप्त हो रहा है। विकासात्मक प्रशासन के क्षेत्र में आज प्रशासकों को ही पहल करनी होती है। विज्ञान और प्रौद्योगिकी के बढ़ते हुए महत्व को देखते हुए प्रशासकों को सभी स्थानों पर विकास कार्यक्रमों को प्रशासित एवं प्रबंधित करना पड़ता है। वर्तमान समय में नौकरशाही केवल एक मूलदर्शक बनकर नहीं रह सकती, बल्कि बहुत से क्षेत्रों में उसे अगुआ बनकर जोखिम भरे खतरा लेने वाले व्यावसायिक कौशल या गुणों को प्रदर्शित करना होता है।

4.7 नौकरशाही का बढ़ता हुआ महत्व

नौकरशाही विकास करने के लिए सरकारी नीतियों को कार्यक्रमों, कार्यक्रमों को परियोजनाओं और परियोजनाओं को कार्यों में परिणत करने के एक यंत्र के रूप में कार्य करती है। भारत जैसे विकासशील देश में सरकार को नियामक मध्यस्थ, प्रबंधक, सेवाओं का संचालक, बेहतर जीवनयापन के लिए राष्ट्रीय मानकों को बढ़ावा देने तथा सामाजिक एवं आर्थिक बीमारियों के अन्वेषण और मरम्मत का कार्य करना पड़ता है। विकास प्रक्रिया में नौकरशाही का हस्तक्षेप ऐसे देश में आवश्यक बन जाता है जहाँ पूर्ण रोजगार प्रदान करना, संतोषजनक अभिवृद्धि या विकास दर, स्थिर कीमतें, भुगतान–संतुलन बनाए रखने, उत्पादन में वृद्धि और उसका समान प्रायः वितरण करना राज्य की प्रतिबद्धता हो।

विकास तथा परिवर्तन की स्थितियों में नौकरशाही सभी आवश्यक व्यावसायिक या उद्यमी

तकनीकी तथा औद्योगिक ज्ञान और साधन प्रदान करती है। नौकरशाही के बिना सरकार कार्य नहीं कर सकती तथा सामाजिक–आर्थिक प्रगति के लिए जो भी लक्ष्य इसने अपने लिए तय किए हैं, उन्हें वास्तव में प्राप्त नहीं कर सकती। नौकरशाही ही इन सब उद्देश्यों को पूरा करने हेतु सही अभिकरण है। यह सभी प्रमुख सामाजिक–आर्थिक गतिविधियों में जैसे – शिक्षा एवं साक्षरता, स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण, ग्रामीण विकास तथा नवीनीकरण, औद्योगिकीकरण और शहरीकरण, आधुनिकीकरण और संस्थागत पुनर्निर्माण के लिए आधार प्रदान करने तथा विभिन्न प्रकार के राष्ट्र निर्माण के कार्यक्रमों में लिप्त हैं।

नौकरशाही का महत्व तेजी से बढ़ रहा है। जैसे–जैसे विकास पर बल दिया जाएगा वैसे–वैसे नौकरशाही का महत्व भी बढ़ता जाएगा। अब हम नौकरशाही के बढ़ते हुए महत्व के लिए उत्तरदायी कुछ कारणों को समझने का प्रयास करेंगे।

बढ़ती हुई जनसंख्या

यदि कोई व्यक्ति राष्ट्रीय परिदृश्य पर नजर डाले तो यह स्पष्ट है कि जनसंख्या बढ़ रही है। विशेषतः ऐसा विकासशील देशों में अधिक हो रहा है जहाँ जनसंख्या रेखागणितीय अनुपात में बढ़कर साधनों के उत्पादन तथा विकास के अन्य सभी प्रयासों को नाकाम कर देती है। जनसंख्या विस्फोट का आशय है अधिक लोगों के भोजन की व्यवस्था, जिसका अर्थ अधिक अन्न की आवश्यकता और इसका तात्पर्य अधिक उत्पादन करना होगा। इसलिए सभी आवश्यक तत्वों जैसे सिंचाई के साधन, उर्वरक, बीज, भंडारण की व्यवस्था बिक्री केन्द्र आदि का प्रावधान करना आवश्यक हो जाता है, उद्योगों के सम्बन्ध में भी यह बात लागू होती है। इन सब कार्यों को अपने अधीन लेने और प्रबंध करने के लिए प्रशासनिक नौकरशाही को उत्तरदायी बनाया गया है। नौकरशाही जनता और सरकार के बीच कड़ी का काम करती है। इसकी भूमिका में विस्तार होने के साथ–साथ नौकरशाही के महत्व में भी स्वाभाविक रूप से वृद्धि होती जाएगी।

औद्योगिक विकास

देश का औद्योगिक विकास, व्यापार तथा वाणिज्य द्वारा आर्थिक वृद्धि, इस्पात कारखानों, पैट्रो–रसायन, उर्वरक कारखाने आदि की स्थापना करने के कारण निश्चित रूप से प्रशासन के विस्तार तथा नौकरशाही पर निर्भरता बढ़ती चली गई। नौकरशाही की आवश्यकता न केवल नीतियों, कार्यक्रमों के निर्धारण में बल्कि विभिन्न क्रियान्वयन गतिविधियों में भी होती है।

जन कल्याण की बढ़ती आवश्यकता

अत्याधिक कार्यकुशलता के साथ जनसेवा की अन्तर्निहित मान्यता के अनुरूप नौकरशाही के लिए पूर्णतया संवेदनशील होना आवश्यक है। भूतकाल में नागरिक घोषणा पत्र तथा आय सम्बन्धित उपायों की पहल के परिणामस्वरूप जनता नौकरशाही से तुरंत कार्यवाही करने की माँग करने लगी है। सूचना के अधिकार के अंतर्गत नागरिक देरी का कारण बताने के लिए कह सकते हैं। चूँकि कुशल निष्पादन राज्य सरकार का दायित्व है, इसलिए आवश्यक संसाधन जुटाना नौकरशाही का कार्य है।

आधुनिक राज्य के बहुल या बहु–आयामी कार्यकलाप

आधुनिक राज्य के कार्य इतने अधिक विविध और अधिक मात्रा में हो गए हैं जिसके कारण अलग–अलग श्रेणियों और वर्गों में लोक सेवकों की भर्ती की जाती है। सरकारी प्रशासन के

विकासात्मक, नियामकीय तथा परम्परागत कानून व्यवस्था या सुरक्षा कार्यों में भी वृद्धि हुई है। बढ़ते हुए कार्यों को पूरा करने के लिए प्रषासन पर निर्भरता ने नौकरशाही के महत्व को अत्याधिक बढ़ा दिया है।

जनता की बढ़ती हुई अपेक्षाएँ और आकांक्षाएँ

वर्तमान समय जन अपेक्षाओं और आकांक्षाओं में वर्षद्धि की क्रान्ति का प्रतीक है। वह समय बीत गया जब लोग निश्क्रिय, गूंगे, अप्रश्नकारी और प्रभावी बने रहते थे तथा सरकार से कोई माँग और अपेक्षा नहीं करते थे। आज जनता सरकार से विभिन्न सेवाओं की माँग करती है, उससे प्रश्न पूछती है और दबाव बनाती है। वे अपने अधिकारों के प्रति जागरूक हो गए हैं और अच्छी शिक्षा, स्वास्थ्य, मकान, जीवन के लिए अच्छे साधन और अच्छे गुणवत्तापूर्ण जीवन की माँग कर रहे हैं।

ये सब बातें जनता का आधुनिक माँगपत्र बनती हैं जिसका तात्पर्य होता है एक सरकार की एक ऐसी लम्बी कार्यसूची जिसके फलस्वरूप नौकरशाही की जिम्मेदारियों और महत्व में निरंतर विकास होता रहता है।

हाल के वर्षों में नौकर□ाही की चुनौतियाँ

उदारीकरण, निजीकरण और वैष्वीकरण के संदर्भ में राज्य, समाज तथा नौकरषाही की भूमिका एवं उत्तरदायित्वों में बदलाव आया है। समय आ गया है जबकि परम्परागत नौकरशाही प्रतिमान संगठनात्मक रूप से नेतष्त्व देने, तेजी से हो रहे वैश्वीकरण की चुनौतियों का सामना करने और नागरिकों की माँगों और अपेक्षाओं को पूरा करने के लिए बदलने, स्वयं को ढालने और पुनः सीखने की आदत डालें, नौकरशाही को वैबर के परे जाना होगा तथा प्रशासनिक या नौकरशाही व्यवस्थाओं को चुनौती देने वाले परिवर्तनों और बदलावों के अनुरूप ढ़ालना होगा। आजकल राज्य प्रशासनिक राज्य से बदलकर साईबरनैटिक राज्य के रूप में कार्य कर रहा है। नागरिक समाज या सभ्य समाज एक ऐसी संस्था के रूप में विकसित हुआ है जो सार्वजनिक विचार–विमर्श और सार्वजनिक सेवाओं के माध्यम से राज्य की नीतियों को प्रभावित कर रहा है। अब नौकरशाही राज्य और समाज के बीच एक मध्यस्थ तथा कार्य को सुगम बनाने वाले के रूप में कार्य कर रही है। इस प्रकार नौकरशाही वस्तुओं और सेवाओं के उत्पादन के लिए जिम्मेदार संरचनाओं और प्रक्रियाओं के निर्माता के अतिरिक्त एक समन्वयकर्त्ता, क्षमता प्रदान करने वाला और सहायक की भूमिका निर्वाह कर रही है। मुख्य चुनौती सही आकार और संवेदनशीलता के साथ–साथ नवीन लोक सेवा, सुशासन, नवीन लोक प्रबंध पर बल तटस्थता तथा प्रतिबद्धता के बदलते रूपों और आदर्शों के संदर्भ में स्वयं को पुनः खोजना है या पुनः परिभाषित करना है। ये परिवर्तन नौकरशाही को उद्देश्य–केन्द्रित, परिणाम–केन्द्रित तथा जन–केन्द्रित बनाने के लिए आवश्यक हैं।

4.8 नौकर□ाही के गुण तथा दोष

इस इकाई के पहले भाग में हमने नौकरशाही की संरचनात्मक और व्यवहारात्मक विशेषताओं का विवेचन किया है। नौकरशाही के गुण तथा दोष क्रमिक रूप से उसकी संरचनात्मक और व्यवहारात्मक कमजोरी से निर्धारित होते हैं। यह तथ्य कि नौकरशाही इसकी लगभग सभी तरफ से तीव्र आलोचना और बुराइयों के बावजूद भी आज तक कायम है, निस्संदेह यह सिद्ध करता है कि इसमें जरूर कोई अंतर्निहित गुण हैं, अन्यथा यह बहुत समय पहले समाप्त हो गई होती।

जैसा कि कहा गया है, नौकरशाही श्रम विभाजन पर आधारित है जो विशेषीकरण को जन्म देती है जोकि संगठनात्मक विवेकीकरण एवं आर्थिक विकास का एक स्वागत योग्य लक्षण या विशेषता है। श्रम विभाजन से नौकरशाही में विशेषज्ञता और व्यावसायीकरण को बढ़ावा मिलता है।

इसी प्रकार, नौकरशाही का दूसरा प्रमुख संरचनात्मक लक्षण, पद्सोपान, सत्ता के वितरण तथा कार्य को अधिक अच्छा तथा प्रभावी पर्यवेक्षण को संभव बनाता है। संगठन में पद्सोपान एक क्रमबद्ध उच्च–अधीनस्थ सम्बन्धों को व्यवस्थित करने तथा विभिन्न पदों पर कार्यरत् कर्मचारी की अलग–अलग भूमिकाओं को समन्वित करने को आसान बनाता है। लम्बवत संगठन संरचना को स्थापित करने के अलावा, समपार्श्वीय कार्य सम्बन्ध बहुत से मतों और विरोधी मतों को ध्यान में रखकर अधिक अच्छे विचार–परामर्श, अनुभवों के एकत्रीकरण, विचारों के आदान–प्रदान तथा आम–सहमति से निर्णय लेने में भूमिका निभाता है। पद्सोपान यदि कभी देरी का कारण बनता है, तो भी यह ठोस नीति निर्माण को संभव बनाता है।

नौकरशाही मूलतः एक ऐसी प्रशासनिक व्यवस्था है जो स्पष्ट और सोचे समझे नियमों और विनियमों पर आधारित है, जो प्रशासन से व्यक्तिगत पूर्वाग्रहों, भाई–भतीजावाद तथा मूर्खताओं को दूर करती है। नियमों और विनियमों का व्यवस्थित रूप उस व्यक्तिगत स्व–विवेकशीलता को कम करता है जिसमें भ्रष्टाचार के बीज होते हैं। सार्वजनिक संगठन तथा सरकार में नियमों के कठोर पालन ने निर्धारित मानकों और प्रक्रियाओं से विचलन या दूर हटने के क्षेत्र को काफी सीमा तक कम किया है तथा प्रशासकों में नैतिक व्यवहार के विकास को बढ़ावा दिया है।

इसी प्रकार, अवैयक्तिकता भी नौकरशाही का एक गुण है, निर्णय किसी एक सम्प्रदाय या क्षेत्र के आधार पर नहीं अपितु संपूर्ण समाज या अन्य सामाजिक कारणों अर्थात जनहित के विचार को ध्यान में रखकर किए जाते हैं। वास्तव में नौकरशाही की कार्यपद्धति में एक महत्वपूर्ण बिन्दु यह है कि निर्णय–निर्माण की अधिकांश प्रक्रिया कागजों और फाईलों में लिखित रहती हैं तथा ये पूर्व निर्धारित स्पष्ट कानूनों, नियमों और विनियमों पर आधारित होती है। नौकरशाही का एक दूसरा गुण तटस्थता है। सरकारी संगठनों के यंत्र के रूप में नौकरशाही से यह आशा की जाती है कि वह बिना व्यक्तिगत प्रतिबद्धता या वर्ग भेद के राज्य नीतियों के अधिकतम हित में कार्य करेगी। परम्परागत (क्लासिकी) नौकरशाही, विशेष रूप से वैबर द्वारा दिया गया रूप, राजनीतिक तटस्थता के सिद्धान्त पर आधारित है जिसमें प्रशासन किसी भी हालत में उनके कार्यों या व्यवहार में किसी राजनीतिक दल विशेष की विचारधारा के प्रति झुका नहीं होता हैं, तथा न ही ऐसी कोई विचारधारा उनकी सरकारी नौकर की भूमिका में परिलक्षित होनी चाहिए। उनसे अपेक्षा रखी गई है कि वे अपने निर्धारित कार्यों और उत्तरदायित्वों को अपनी व्यक्तिगत पसंद या नापसंद से प्रभावित हुए बिना एक व्यावसायिक ढंग से संपादित करें।

नौकरशाही एक ऐसी व्यवस्था है जिसमें कर्मचारियों का चयन योग्यता के आधार पर होता है तथा वे अपने कार्य संपादन के दौरान अनुशासन और नियंत्रण में रहते हैं। इस प्रकार सर्वश्रेष्ठ मस्तिष्क तथा विवेकपूर्ण संरचनात्मक, कार्यात्मक व्यवस्था के महत्वपूर्ण सम्मिश्रण से बेहतर परिणाम मिलने की संभावना या उम्मीद रहती है।

सरकारी प्रशासन में नौकरशाही का काफी महत्वपूर्ण योगदान है। इसने प्रशासन को अधिक कुशल, स्थायी, वस्तुनिष्ठ, पक्षपात रहित तथा एकरूप बनाया है। वास्तव में, यह लगभग अपरिहार्य है। इसलिए आवश्यक यह है कि उन लक्षणों तथा कमियों या बुराइयों से बचा

जाएँ जो इसके कार्यकरण को खराब करती हैं। नौकरशाही को इसकी सही सीमा या परिधि में रखने के लिए उसका लगातार मूल्यांकन किया जाना चाहिए।

नौकरशाही के दोष

नौकरशाही के दोष भी उन्हीं संरचनात्मक लक्षणों एवं विशेषताओं से उत्पन्न हुए हैं जिनका सम्बन्ध इसके गुणों से है। वास्तव में देखा जाएँ तो सकारात्मक व्यावहारिक गुणों को यदि सावधानी से प्रयोग में न लाया जाएँ तो ये ही नकारात्मक विकार्यो में बदल जाते हैं।

विभिन्न प्रकार की आलोचनाएँ नौकरशाही के विरुद्ध की गई हैं। नौकरशाही के सबसे बड़े आलोचकों में से एक रामसे मूर ने अपनी पुस्तक *"हाऊ ब्रिटेन इज गवर्नड"* में लिखा है कि लोकतंत्र की छत्रछाया में नौकरशाही विकसित और फलीफूली है। "फ्रैंकेस्टीन मोन्स्टर" की भाँति कभी–कभी ऐसा लगता है कि वे अपने सृजनकर्त्ता को ही निगल जाएगी। लॉर्ड हीवर्ट ने नौकरशाही की बढ़ती हुई सत्ता को "नई निरंकुशता या तानाशाही" का नाम दिया है।

नौकरशाही जनता की आवश्यकताओं और माँगों के प्रति उदासीनता के लिए जानी जाती है। प्रायः यह देखा गया है कि जो लोग सरकारी अधिकारियों से सहायता लेने के लिए आते हैं उन्हें बेवजह ही तंग किया जाता है। इससे यह उजागर होता है कि नौकरशाह लोगों को इस प्रकार तंग करने में आनंद का अनुभव करते हैं। प्रायः नौकरशाह जन आकांक्षाओं तथा माँगों के प्रति उदासीनता या बेरुखी प्रदर्शित करते हैं। वे व्यवस्था द्वारा इस प्रकार नियमित हो जाते हैं कि वे सार्वजनिक हित की अनदेखी कर देते हैं या उसके प्रति उदासीन हो जाते हैं।

नौकरशाही ने उत्तरदायित्व के विखराब को भी जन्म दिया है। संगठन में पद्सोपान व्यवस्था के अंतर्गत कोई भी सकारात्मक उत्तरदायित्व ग्रहण नहीं करना चाहिए। कार्य में टालमटोल तथा गलत कार्यों या निष्क्रियता के लिए एक–दूसरे पर उत्तरदायित्व का स्थानातरण नौकरशाही की स्वाभाविक प्रवृत्ति बन गई है।

नौकरशाही अत्याधिक लालफीताशाही तथा औपचारिकता के दुर्गुणों से भी ग्रस्त है। लालफीताशाही, जिसका अर्थ नियमों का शाब्दिक तथा कठोर पालन करना है", स्वयं नौकरशाही का एक प्रतीक बन गई है। नौकरशाही का एक विशेष लक्षण या विशेषता "उपयुक्त तरीकों" से प्रक्रिया पर जोर देना एवं पूर्व दृष्टान्तों को पकड़े रहना है भले ही वे लक्ष्यों को पूरा करने में और परिणामों की प्राप्ति में अनुपयोगी तथा महँगे या खर्चीले ही क्यों न हों।

गतिशीलता का अभाव तथा व्यवहार में अनम्यता, लकीर का फकीर बने रहना तथा लकीर से न हटना नौकरशाही की अन्य बुराइयाँ हैं। यह पुरातनवादी होती है। यह सुरक्षित खेल खेलती है तथा सुरक्षा की परिधि लांघकर कोई काम नहीं करना चाहती अर्थात् नौकरशाह नियमों की सीमा के बाहर जाने का साहस नहीं कर पाते। सामान्यतः प्रशासन खतरा उठाने, साहस दिखाने तथा दूर दृष्टिपूर्ण कार्यों के पक्षधर नहीं हैं। परिणामस्वरूप नौकरशाही उच्च अधिकारियों के आदेषों या पूर्व दृष्टांतों और प्रक्रियाओं के अंतर्गत संभव कार्य ही करते हैं।

अपना साम्राज्य–निर्माण (शक्तियों का संचय) नौकरशाही की निहित प्रवृत्तियों में से एक है। उच्च–स्तरीय प्रशासनिक अधिकारी अपने अधीन विभिन्न विभागों और संगठनों की स्थापना कर अपनी सत्ता और शक्तियों का विस्तार करने में विश्वास करते हैं तथा निर्णयों की उपयोगिता या आवश्यकता के आधार पर उसका औचित्य सिद्ध करते हैं।

नौकरशाही में उत्तरदायित्व कम तथा छिपी हुई सत्ता अधिक रहती है, जबकि सत्ता तथा उत्तरदायित्व साथ–साथ होने चाहिए क्योंकि वे एक ही सिक्के के दो पहलू हैं।

नौकरशाही अर्थपूर्ण कार्यों के प्रति सचेत होने के स्थान पर छोटे और रोजमर्रा के कार्यों में विलीन रहती है। इसकी छवि अनावश्यक रूप से कठोर या अनम्य तथा जन आकांक्षाओं के प्रति उदासीन सोच रखने वाली संस्था की है जिसमें कभी–कभी ऐसा प्रतीत होता है कि नौकरशाही "लोकतंत्र विरोधी" है। वाल्टर बेगहाट का मत है कि "यह (नौकरशाही) एक आवश्यक बुराई है, नौकरशाह परिणामों की तुलना में रोजगार के कार्यों में समय गुजारने को प्राथमिकता देते हैं।" इसी प्रकार ब्रूक लिखते हैं, "वे (नौकरशाह) अपने व्यावसायिक कार्यों की प्रकृति और गुणवत्ता की अपेक्षा उसके स्वरूप को अधिक महत्व प्रदान करते हैं।"

बोध प्रश्न 2

टिप्पणी: i) अपने उत्तरों के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ii) इकाई के अंत में दिए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

1) हाल के वर्षों में नौकरशाही की बढ़ती हुई महत्ता के कारण बताइए।

.....

.....

.....

.....

2) नौकरशाही के गुणों की चर्चा कीजिए।

.....

.....

.....

.....

4.9 निष्कर्ष

नौकरशाही संगठन का एक आवश्यक भाग है। इस इकाई में हमने लोक सेवा की व्याख्या, नौकरशाही के विभिन्न अर्थ, इसके विभिन्न प्रकार और स्वरूप, जैसा कि मार्स्टिन मार्क्स ने अभिभावक नौकरशाही, जातिगत नौकरशाही, संरक्षण नौकरशाही तथा योग्यता–आधारित नौकरशाही बताए हैं, का विवेचन किया है। हमने मैक्स वैबर के नौकरशाही के "आदर्श प्रतिमान" का भी उल्लेख किया है जो नौकरशाही के कुछ सकारात्मक संरचनात्मक और व्यवहारात्मक विशेषताओं को स्पष्ट करता है।

नौकरशाही किसी देश में विकास और प्रगति लाने में तथा उसको कायम रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। हाल के वर्षों में नौकरशाही के बढ़ते हुए महत्व में कुछ कारकों जैसे बढ़ती हुई जन आकांक्षाएँ, आधुनिक राज्य की विविध गतिविधियाँ, औद्योगिक विकास आदि का योगदान रहा है। इन सबका वर्णन भी इस इकाई में किया गया है। यद्यपि अनेकों

विद्वानों द्वारा नौकरशाही की कड़ी आलोचना की गई है किन्तु इन सब बुराइयों के बावजूद हम इस व्यवस्था को छोड़ नहीं सके हैं तथा कार्य संपादन के लिए कोई दूसरा विकल्प प्रस्तुत नहीं कर पाए हैं। यह इस बात को सिद्ध करता है कि नौकरशाही में कुछ गुण अन्तर्निहित हैं। इस इकाई में नौकरशाही के गुण और दोषों की चर्चा भी विस्तार से की गई है।

4.10 शब्दावली

पुरातनवाद (Anachronism) : कोई चीज जो बहुत पुरानी या प्रयोग से बाहर लगती हो।

टालमटोल (Buckpassing) : किसी अन्य को दायित्व या दोष आरोपित करने की एक अनौपचारिक अभिव्यक्ति।

फ्रैंकेंस्टाइन का मोन्स्टर (Frankenstein's Monster) : एक काल्पनिक चरित्र जिसने अपने जन्मदाता को ही खत्म कर दिया।

4.11 संदर्भ लेख

Albrow, Martin, 1970, B*ureaucracy,* Macmillan: London.

Arora, Ramesh K. and Rajni Goyal, 2014, *Indian Public Administration Institutions and Issues*, New Age International Publishers: New Delhi.

Bhattacharya, Mohit, 1984, *Bureaucracy and Development Administration,* Uppal Publishing House: Delhi.

Bhattacharya, Mohit, 2013, *New Horizons of Public Administration*, Jawahar Publishers & Distributors: New Delhi.

Dimock, Marshall E., 1960, "Bureaucracy Self-examined", quoted in Albert Lepawsky, *Administration and Management*, Oxford and IBH Publishing Co., New Delhi.

Downs, Anthony, 1967, *Inside Bureaucracy*, Little, Brown: Boston. (http://192.5.14.110/pubs/papers/2008/P2963.pdf)

Finer, H., 1961, *The Theory and Practice of Modern Government*, H. Holt: Oxford.

Gladden, E.N., 1948, *The Civil Service: Its problems and Future*, Staple Press: The University of Michigan, Michigan.

Heady, Ferrel, 2001, *Public Administration – A Comparative Perspective*, Marcel Dekker: New York.

Hooja, R. & K.K.Parnami. (Eds.), 2011, *Civil Service Training in India.* Rawat Publications: New Delhi.

Hyneman, Charles. 1960, *"Bureaucracy and Democratic System"*, In Albert Lepawsky, *Administration and Management*, Oxford and IBH Publishing Co.: New Delhi.

IGNOU Course Material, *State Society and Public Administration*, MPA-011

Marx. F.M. 1957, *Administrative State,* University of Chicago Press: Chicago.

Vieg, John M., *The Growth of Public Administration*, in Fritz Morstein Marx, (Ed.), 1968, *Elements of Public Administration*, Prentice-Hall of India: New Delhi.

Merton, Robert K. et. al (Eds), 1952, *Reader in Bureaucracy*, Free Press: Glencoe.

Muir, Ramsay, *How Britain is Governed*, 1933, Constable & Company Limited: Edinburgh.

Refurbishing of Personnel Administration, 2008, Second ARC Report, http://arc.gov.in/10th/ARC_10thReport

Sahni, Pardeep and Uma Medury, (Eds), 2003, *Governance for Development*, PHI: New Delhi.

Sharma, M.K., 2007, *Personnel Administration*, Anmol Publisher: New Delhi.

Sharma, M.P., B.L.Sadana and Harpreet Kaur, 2013, *Public Administration in Theory and Practice,* Kitab Mahal: Allahabad.

Sinha, V.M. 1986, *Personnel Administration – Concepts and Management – The Broadening Horizons* (Vol.2), Himalaya Publishing House: Bombay.

4.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) आपके द्वारा दिए गए उत्तर में निम्नलिखित बातें होनी चाहिए:

- नौकरशाही की अवधारणा के बारे में कोई निश्चित अवधारणात्मक सटीकपन नही है।
- मूलतः, यह कार्यों और व्यक्तियों के ऐसे व्यवस्थित एवं संगठित ढाँचे के रूप में जाना जाता है, जो ऐसे सामूहिक प्रयासा क वाछित उद्देश्यों को सर्वाधिक प्रभावी ढंग से प्राप्त करता है।
- परम्परागत रूप से इसे मेज या डेस्क सरकार या शासन कहा जाता है।
- नौकरशाही का सैद्धान्तिक प्रारूप संगठन की संरचना पर बल देता है जबकि अनुभवमूलक प्रारूप संगठन के व्यावहारिक एवं कार्यात्मक रूपों या ढाँचों पर बल देता है।

2) आपके द्वारा दिए गए उत्तर में निम्नलिखित बातें होनी चाहिए:

- अभिभावक / संरक्षक नौकरशाही
- जातिगत नौकरशाही
- संरक्षण नौकरशाही
- योग्यता आधारित नौकरशाही

बोध प्रश्न 2

1) आपके द्वारा दिए गए उत्तर में निम्नलिखित बातें होनी चाहिए:

- बढ़ती हुई जनसंख्या
- औद्योगिक विकास
- जन कल्याण की बढ़ती आवश्यकतायें
- आधुनिक राज्य के बहुल या बहु–आयामी कार्यकलाप
- जनता की बढ़ती हुई अपेक्षाएँ और आकांक्षाएँ

2) आपके द्वारा दिए गए उत्तर में निम्नलिखित बातें होनी चाहिए:

- श्रम विभाजन से विशेषीकरण, विशेषज्ञता एवं व्यावसयीकरण संभव होता है।
- सत्ता का वितरण एवं कार्य का प्रभावी पर्यवेक्षण
- नियमों एवं विनियमों के कारण व्यक्तिगत पूर्वाग्रहों और भाई–भतीजावाद का अंत होता है तथा अधिकारी या नौकरशाही के व्यवहार में नैतिक व्यवहार को बढ़ावा मिलता है।
- अवैयक्तिकता
- तटस्थता
- संगठनात्मक व्यवस्था, वस्तुनिष्ठता तथा स्थिरता

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 5 कार्मिक विभाग/संघ लोक सेवा आयोग/राज्य लोक सेवा आयोग/कर्मचारी चयन आयोग

इकाई की रूपरेखा

5.0 उद्देश्य

5.1 प्रस्तावना

5.2 कार्मिक, लोक शिकायत और पेंशन मंत्रालय

5.2.1 कार्मिक विभाग का विकास

5.2.2 कार्मिक, लोक शिकायत और पेंशन मंत्रालय की संरचना

5.2.3 कार्मिक, लोक शिकायत और पेंषन मंत्रालय की भूमिका और कार्य

5.3 लोक सेवा आयोग का विकास

5.3.1 संघ और राज्य लोक सेवा आयोगों का गठन

5.3.2 लोक सेवा आयोग के कार्य

5.4 कर्मचारी चयन आयोग : उत्पत्ति

5.4.1 कर्मचारी चयन आयोग की संरचना

5.4.2 कर्मचारी चयन आयोग की भूमिका और कार्य

5.5 निष्कर्ष

5.6 शब्दावली

5.7 संदर्भ लेख

5.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

5.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप:

- कार्मिक, लोक शिकायत और पेंशन मंत्रालय के विकास, संरचना, भूमिका तथा कार्यों का वर्णन कर सकेंगे;
- लोक सेवा आयोगों की उत्पत्ति और विकास ज्ञात कर सकेंगे तथा उनकी भूमिका और कार्यों का विवेचन कर सकेंगे;
- कर्मचारी चयन आयोग की संरचना और कार्यों की व्याख्या कर सकेंगे।

5.1 प्रस्तावना

प्रशासन की प्रभावी कार्य प्रणाली में "कार्मिक" की भूमिका महत्वपूर्ण है। इसलिए "कार्मिक प्रशासन" लोक प्रशासन का महत्वपूर्ण घटक है। यदि लोकतांत्रिक व्यवस्था वाले देश में प्रशासन राजनीतिक कार्यपालकों के लिए शासन चलाने का एक साधन है, तो कार्मिक एक धुरी है जिसके चारों ओर प्रशासन घूमता रहता है। लोक प्रशासन के मुख्य लक्ष्य, कार्य और आधार, नीतियाँ तथा कार्यक्रम, उपाय और प्रणालियाँ, व्यवहार और क्रिया, उसका मिशन,

*यह इकाई बी.पी.ए.ई.–104, खंड 3 से ली गई है।

विज़न तथा वितरण प्रणाली आदि काफी हद तक सार्वजनिक संगठनों के कार्मिक पर निर्भर करते हैं। लोक प्रशासन का संपूर्ण परिवेश और गुणवत्ता काफी हद तक सार्वजनिक संस्थानों में कार्यरत कार्मिकों द्वारा निर्धारित की जाती है।

भारत सरकार में कार्मिक संबंधी इन सभी गतिविधियों के लिए कार्मिक, लोक शिकायत और पेंशन मंत्रालय उत्तरदायी है। उसके बाद संघ लोक सेवा आयोग (Union Public Service Commission) है। यह आयोग, एक परामर्षदायी निकाय है और इसे सिविल सेवाओं के कार्मिकों की भर्ती तथा चयन का काम सौंपा गया है। इसी प्रकार, प्रशासन के निचले स्तर के कार्मिकों की भर्ती कर्मचारी चयन आयोग (Staff Selection Commission) द्वारा की जाती हैं। इस इकाई में हम कार्मिक विभाग, संघ लोक सेवा आयोग/राज्य लोक सेवा आयोग तथा कर्मचारी चयन आयोग की भूमिका, विकास तथा कार्यों के बारे में अध्ययन करेंगे।

5.2 कार्मिक, लोक शिकायत और पेंशन मंत्रालय

5.2.1 कार्मिक लोक शिकायत और पेंशन मंत्रालय का विकास

भारत सरकार जैसे विशाल और जटिल संगठन में केंद्रीय सरकार के कार्मिक संबंधी कार्यों का निष्पादन गृह मंत्रालय अपनी 'सेवाएँ तथा स्थापना अधिकारी स्कंध' के माध्यम से करता था। गृह मंत्रालय इन जिम्मेदारियों के निर्वहन में वित्त मंत्रालय के स्थापना प्रभाग (Establishment Division) के साथ निकट संपर्क बनाए रखता था। यह एक प्रकार की संयुक्त प्रबंधन व्यवस्था थी। भारत के संविधान के अनुच्छेद 315 के अधीन गठित एक सांविधानिक प्राधिकरण के रूप में संघ लोक सेवा आयोग भारत सरकार के अधीन उच्च सिविल सेवाओं और अन्य पदों के लिए परीक्षा और साक्षात्कार के माध्यम से कार्मिकों की भर्ती और चयन करता है। इसके अलावा, यह आयोग, केंद्रीय कार्मिक प्रशासन की संरचना में एक प्रमुख सलाहकार की भूमिका भी निभाता है। ऐसे कुछ अन्य संगठन और एजेंसियाँ भी थीं जिनका परामर्श सरकार में कार्मिक मामलों के व्यापक तथा प्रभावी प्रबंध के लिए अपेक्षित था। यह व्यवस्था अगस्त 1970 तक बनी रही। इस व्यवस्था के परिणामस्वरूप दायित्वों का विभाजन हुआ तथा कार्मिक के मामलों में एकीकृत केंद्रीय निर्देशन का अभाव होने लगा। इससे कार्मिक संबंधी कार्यों में केंद्रीय निर्देशन के लिए एक ऐसे मंत्रालय या विभाग की आवश्यकता महसूस हुई, जो निर्देशन तथा गठन, दिशा–निर्देश और अधीक्षण, मूल्यांकन तथा नियंत्रण का मुख्य केंद्र हो। इस मंत्रालय या विभाग की आवश्यकता न केवल दैनिक कार्यों के लिए, अपितु राष्ट्रीय लक्ष्यों तथा कल्याणकारी राज्य के लोकतांत्रिक समाजवादी दृष्टिकोण के बदलते परिवेश के संदर्भ में भावी, विकासात्मक कार्यक्रमों के लिए पूर्णतः दायित्व सौंपने के लिए भी थी।

तीसरी लोक सभा (1966) की आकलन समिति (Estimates Committee) ने पहली बार मंत्रिमंडल सचिवालय के अधीन एक ऐसी एकल एजेंसी की स्थापना की सिफारिश की जो सिविल सेवाओं की सेवा संबंधी शर्तों और निबंधनों के विनियमन के लिए जिम्मेदार हो। समिति की टिप्पणी थी कि "सिविल सेवा के विस्तार की राष्ट्रीय वचनबद्धता वाले कल्याण राज्य में सरकार की बढ़ती हुई जिम्मेदारी को एकल एजेंसी के प्रभावी कार्मिक प्रबंध द्वारा ही नियंत्रित किया जा सकता है। यह एकीकृत एजेंसी मंत्रिमंडल सचिवालय के नियंत्रणाधीन होनी चाहिए तथा गृह मंत्रालय और वित्त मंत्रालय को दिए गए दोहरे नियंत्रण समाप्त करके इस एकल एजेंसी को संपूर्ण सेवाओं से संबंधित शर्तों तथा निबंधनों के विनियमन के लिए जिम्मेदार बनाया जाना चाहिए।"

भारत में, प्रथम प्रशासनिक सुधार आयोग (First Administrative Reforms Commission - ARC) ने लोक कार्मिक प्रशासन के विभिन्न पहलुओं की गहराई से जाँच की। भारत सरकार के तंत्र तथा कार्याविधियों का अध्ययन करने वाले देशमुख अध्ययन दल (Deshmukh Study Team) ने कहा कि "भारत सरकार के तंत्र में केंद्रीय कार्मिक एजेंसी के स्वरूप में और कार्मिक प्रशासन के संदर्भ में संपूर्ण कार्यों के आबंटन संबंधी व्यवस्था में आवश्यक सुधार करना जरूरी है।" दल ने आगे कहा कि केंद्रीय कार्मिक एजेंसी को कार्मिक विभाग का रूप प्रदान किया जाना चाहिए तथा उसके अध्यक्ष के रूप में एक पूर्णकालिक तथा स्वतंत्र सचिव नियुक्त किया जाना चाहिए।

प्रशासनिक सुधार समिति की सिफारिशें मंजूर हो जाने के बाद वर्ष 1970 में कार्मिक विभाग स्थापित किया गया।

इसके बाद दोबारा वर्ष 1985 में एक अलग विभाग के रूप में इसे गृह मंत्रालय के "अंदर" से बदलकर मंत्रालय के "अधीन" कर दिया गया। अंततः 1985 में कार्मिक विभाग को कार्मिक, लोक शिकायत और पेंशन मंत्रालय बना दिया गया। यह मंत्रालय कार्मिक राज्य मंत्री के सहयोग से प्रधानमंत्री के संपूर्ण प्रभार के अधीन काम कर रहा है।

5.2.2 कार्मिक, लोक शिकायत और पेंशन मंत्रालय की संरचना

कार्मिक, लोक शिकायत और पेंशन मंत्रालय कार्मिक संबंधी मामलों में केंद्र सरकार की समन्वय एजेंसी है। कार्मिक मामलों के अंतर्गत विशेष रूप से भर्ती, प्रशिक्षण, कैरियर विकास, कर्मचारी कल्याण से और सेवानिवृत्ति के बाद की व्यवस्था से संबंधित मुद्दे शामिल हैं। मंत्रालय, अनुक्रियात्मक और जनोन्मुखी प्रशासन विकसित करने की प्रक्रिया से भी संबद्ध है। मंत्रालय, प्रधानमंत्री के समग्र प्रभार के अधीन है। प्रधानमंत्री की सहायता के लिए दो राज्य मंत्री हैं, उनमें से एक राज्यमंत्री कार्मिक और प्रशिक्षण विभाग व पेंशन और पेंशनभोगी कल्याण विभाग के लिए है। दूसरा राज्यमंत्री प्रशासनिक सुधार एवं लोक शिकायत विभाग के लिए है। मंत्रालय के सभी तीनों विभाग सचिव (कार्मिक) के प्रभार के अधीन कार्य करते हैं।

इस मंत्रालय में तीन विभाग हैं। ये हैं:

1) कार्मिक और प्रशिक्षण विभाग (Department of Personnel and Training – DoPT)

2) पेंशन और पेंशनभोगी कल्याण विभाग (Department of Pensions and Pensioners' Welfare – DOP & PW), और

3) प्रशासनिक सुधार और लोक शिकायत विभाग (Department of Administrative Reforms and Public Grievances – DARPG)।

i) कार्मिक और प्रशिक्षण विभाग (Department of Personnel and Training – DoPT)

कार्मिक विभाग कार्मिक नीति निर्माता के रूप में कार्य करता है और यह सुनिश्चित करने के लिए सरकार के हित-प्रहरी का काम करता है कि कार्मिकों की भर्ती, सेवा शर्तों के विनियमन, स्थानांतरण, प्रतिनियुक्ति के मामलों में निर्धारित किए गए कुछ स्वीकृत मानकों और मानदंडों का पालन किया जाता है। इसे कार्मिक प्रबंधन मामलों में केंद्रीय सरकार के सभी संगठनों को सलाह देने का कार्य भी सौंपा गया है। यह भारतीय प्रशासनिक सेवा और केंद्रीय सचिवालय सेवाओं के लिए संवर्ग नियंत्रण प्राधिकरण है।

विभाग केंद्रीय स्टाफिंग स्कीम का भी प्रचालन करता है जिसके अधीन अखिल भारतीय सेवाओं और समूह "क" केंद्रीय सेवाओं से उपयुक्त अधिकारी चुने जाते हैं और सावधिक प्रतिनियुक्ति के आधार पर उपसचिव/निदेशक और संयुक्त सचिव के स्तर पर पदों में नियुक्त किए जाते हैं। विभाग लोक सेवा आयोग तथा राज्य सेवा आयोग के माध्यम से सरकार के लिए कर्मियों की भर्ती सुनिश्चित करता है।

कार्मिक और प्रशिक्षण विभाग का प्रशिक्षण प्रभाग भारतीय प्रशासनिक सेवा और अन्य अखिल भारतीय और केंद्रीय सेवाओं की भर्तियों के लिए प्रारंभिक प्रशिक्षण संचालित करने के लिए उत्तरदायी है। यह केंद्र और राज्य सरकारों की विभिन्न श्रेणियों के कार्मिकों के लिए कई प्रशिक्षण कार्यक्रम भी प्रायोजित करता है। प्रशिक्षण प्रभाग, सरकार की प्रशिक्षण संस्थाओं के प्रशिक्षण उपकरणों के उन्नयन के लिए भी उत्तरदायी है। प्रशिक्षण प्रभाग, आई.ए.एस. अधिकारियों के लिए कैरियर के दौरान प्रशिक्षण संबंधी स्कीमों की व्यवस्था भी करता है।

ii) **पेंशन और पेंशनभोगी कल्याण विभाग (Department of Pensions and Pensioners' Welfare – DP&PW)**

पेंशन और पेंशनभोगी कल्याण विभाग – सी.एस.सी. (पेंशन) नियम 1972 के अंतर्गत शामिल केंद्र सरकार के कर्मचारियों के पेंशन और अन्य सेवा निवृत्ति लाभों से संबंधित नीतियों का निर्माण करने वाला नोडल विभाग है। केंद्र सरकार और परिवार पेंशनभोगियों के लिए पेंशन नीति के निर्माण के अलावा, यह पेंशनभोगियों की शिकायतों के निराकरण के मंच के रूप में पेंशनभोगियों के कल्याण और सेवाओं के संवर्धन का प्रयास भी करता है। वैसे, रेल और रक्षा मंत्रालयों के पेंशनभोगियों के संबंधित पेंशन संबंधी नियमों द्वारा शासित है और उनकी अपनी–अपनी प्रशासनिक व्यवस्था/ढाँचा है।

iii) **प्रशासनिक सुधार और लोक शिकायत विभाग (Department of Administrative Reforms and Public Grievances - DARPG)**

कार्मिक और केंद्रीय सरकारी एजेंसियों से संबंधित लोक शिकायतों के निवारण और प्रशासनिक सुधारों के लिए यह विभाग नोडल एजेंसी है। यह विभाग, संगठन और पद्धति की गतिविधियों से संबंधित कार्य भी करता है और मंत्रालय तथा विभागों को सलाह देता है।

5.2.3 कार्मिक, लोक शिकायत और पेंशन मंत्रालय की भूमिका और कार्य

कार्मिक विभाग कार्मिक, लोक शिकायत और पेंशन मंत्रालय के अंतर्गत आता है। यह विभाग लोक कार्मिक प्रबंधन के क्षेत्र में सभी गतिविधियों की नीति बनाने तथा इसकी सभी गतिविधियों के समन्वयन के लिए एक नोडल एजेंसी है। लोक कार्मिक प्रबंधन की विभिन्न गतिविधियों के अंतर्गत प्रशासनिक सतर्कता, प्रशिक्षण, कर्मचारी कल्याण, सयुंक्त परामर्श और अनिवार्य विवाचन के लिए तंत्र, सिविल सेवाओं में अनुसूचित जातियों और जनजातियों तथा अन्य वर्गों के आरक्षण, प्रशासनिक सुधार, लोक शिकायतें और पेंशन शामिल हैं। यह विभाग विभिन्न अखिल भारतीय और केंद्रीय सेवाओं के लिए नियम–निर्माण का काम करता है, जिसमें संदेह की स्थिति में विनियमों की अंतिम व्याख्या करना और कार्यान्वयन तथा संवर्ग प्रबंधन का अवलोकन भी शामिल है। यह विभाग उद्देश्यमूलक पारितोषिक और दंड देने की प्रणालियाँ, द्वंद्व–प्रबंधन क्रियाविधियाँ तथा आवश्यकता–आधारित कर्मचारी कल्याण

योजनाएँ बनाकर संवर्धनात्मक कार्य करने के अलावा प्रशिक्षण (देश के अंदर और बाहर), अनुभव से जुड़े उत्पादकता–मूलक तैनाती के माध्यम से कैरियर संबंधी प्रबंध, प्रतिनियुक्ति तथा समनुदेशन, कार्मिक नीति संबंधी अनुप्रयुक्त तथा भावी अनुसंधान करने और योजना बनाने के माध्यम से सिविल अधिकारियों के विकासात्मक पहलुओं से भी संबंधित है। कार्मिक विभाग भारतीय प्रशासनिक सेवा और केंद्रीय सचिवालय सेवाओं का नियंत्रण करता है। इसके अलावा, यह विभाग केंद्रीय सतर्कता आयोग, केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो, प्रशासनिक अधिकरण, संघ लोक सेवा आयोग, कर्मचारी चयन आयोग और भारतीय लोक प्रशासन संस्थान (आई.आई.पी.ए.) से संबंधित सभी प्रशासनिक मामलों की देखरेख भी करता है। यह मसूरी स्थित लाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय प्रशासनिक अकादमी तथा नई दिल्ली स्थित सचिवालय प्रशिक्षण और प्रबंध संस्थान के कार्य संचालन का पर्यवेक्षण भी करता है।

लोकतांत्रिक राज्य की वर्तमान आधुनिक अपेक्षाओं के उभरते संदर्भ में इस मंत्रालय की भूमिका यथावत् नहीं बनी रहनी चाहिए, अपितु सुनियोजित प्रणाली का निर्माण किया जाना चाहिए जहाँ समाज का श्रेष्ठ वर्ग सिविल सेवाओं में जाने की ओर प्रवृत्त हो। आज के संदर्भ में कार्मिक मंत्रालय की कैरियर संबंधी विकास, संवर्ग प्रबंधन और समीक्षा, कर्मचारी कल्याण, लोक शिकायतें, कार्मिक संबंधी नीतियों में अनुसंधान, जैसे नौकरशाही के हर पहलू के साथ टकराव की स्थिति पैदा हो गई है। यह भी सही है कि प्रणाली के इन सभी पहलुओं में एकदम परिवर्तन लाना संभव नहीं है। सीमित साधन, पर्याप्त और प्रशिक्षित जनशक्ति का अभाव, संरचनात्मक सहयोग और कई अन्य कारक इनके सुधार में बाधक बन जाते हैं।

बोध प्रश्न 1

टिप्पणी: i) अपने उत्तरों के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ii) इकाई के अंत में दिए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

1) कार्मिक, लोक शिकायत और पेंशन मंत्रालय की संरचना की चर्चा कीजिए।

.....

.....

.....

.....

2) कार्मिक, लोक शिकायत और पेंशन मंत्रालय के कार्यों की व्याख्या कीजिए।

.....

.....

.....

.....

5.3 लोक सेवा आयोग का विकास

भारत सरकार अधिनियम, 1919 में पहली बार भारत में लोक सेवा आयोग की स्थापना करने की आवश्यकता महसूस की गई थी। उसमें यह कहा गया कि एक ऐसे विशेषज्ञ निकाय की

स्थापना की जानी चाहिए, जो राजनीतिक हस्तक्षेप से मुक्त रहकर सिविल अधिकारियों की भर्ती तथा उनके सेवा संबंधी मामलों का विनियमन करे।

वर्ष 1924 में 'ली आयोग' (Lee Commission) ने पुनः सिफारिश की कि भारत सरकार अधिनियम, 1919 में मान्य सांविधिक लोक सेवा आयोग की अविलंब स्थापना की जाए। इस आयोग के अनुसार, सांविधिक लोक सेवा आयोग के कार्य निम्नलिखित होंगे:

i) लोक सेवाओं के लिए कार्मिकों की भर्ती और इन सेवाओं में प्रवेश पाने के लिए अर्हता के समुचित स्तरों की स्थापना;

ii) अनुशासनात्मक नियंत्रण और सेवाओं के संरक्षण से जुड़े अर्ध–न्यायिक कार्य;

वर्ष 1926 में पहली बार लोक सेवा आयोग की स्थापना हुई, जिसमें अध्यक्ष के अलावा चार सदस्य शामिल थे। आयोग के कार्यों का स्वरूप परामर्शदायी था।

ली आयोग ने प्रांतों में वैसा ही समरूप आयोग स्थापित करने की सिफारिश नहीं की। 1930 में लंदन में हुए पहले गोलमेज सम्मेलन में ब्रिटिश सरकार ने अपने 1933 के सांविधानिक प्रस्तावों में और भारतीय सांविधानिक सुधार संबंधी संयुक्त समिति ने (1933–34 में) 'संघीय लोक सेवा आयोग' के अलावा प्रांतों में लोक सेवा आयोग की स्थापना पर जोर दिया। भारत सरकार अधिनियम, 1935 ने इन सिफारिशों को मूर्त रूप दिया। सिफारिशों के अनुसार हर प्रांत या प्रांतों के समूह के लिए प्रांतीय लोक सेवा आयोग के साथ–साथ संघ के लिए लोक आयोग के गठन की संकल्पना की गई। इन्हें लोक सेवाओं में भर्ती के लिए परीक्षाएँ आयोजित करने का कार्य सौंपा गया तथा सेवा–शर्तों से संबंधित मुख्य मामलों में उनका परामर्श लेने के लिए सरकार बाध्य थी।

1 अप्रैल, 1937 से केंद्र का तत्कालीन लोक सेवा आयोग 'संघीय लोक सेवा आयोग' (Federal Public Service Commission) बन गया।

26 जनवरी, 1950 को भारतीय संविधान के प्रवर्तन से 'संघीय लोक सेवा आयोग' को 'संघ लोक सेवा आयोग' (यू.पी.एस.सी.) के नाम से जाना जाने लगा। संघ लोक सेवा आयोग के मुख्य उद्देश्य इस प्रकार हैं:

- सिविल सेवाओं के विनिर्दिष्ट अधिकारी समूह तथा भारत सरकार के अन्य पदों पर भर्ती करने के उद्देश्य से लिखित परीक्षाएँ तथा साक्षात्कार आयोजित करना।
- भर्ती की पद्धतियों, पदोन्नति के सिद्धांतों, अनुशासनात्मक पहलुओं और अशक्तता पेंशन आदि कुछ सेवा–शर्तों के संबंध में नियम बनाने में सरकार को सलाह देना।

5.3.1 संघ और राज्य लोक सेवा आयोगों का गठन

भारत के संविधान के अध्याय II, भाग XIV के अनुच्छेद 315 में प्रावधान है कि :

i) इस अनुच्छेद के उपबंधों के अधीन रहते हुए संघ के लिए एक लोक सेवा आयोग तथा प्रत्येक राज्य के लिए एक लोक सेवा आयोग होगा।

ii) यदि दो या उससे अधिक राज्य, उन राज्यों के समूह के लिए एक ही लोक सेवा आयोग की स्थापना के लिए सहमत हों, और यदि उन राज्यों के प्रत्येक राज्य की विधानमंडल के प्रत्येक सदन या जहाँ दो सदन हो, में इस आशय का प्रस्ताव पारित हो गया हो, तो संसद कानून द्वारा संयुक्त लोक सेवा आयोग की स्थापना करेगी।

iii) संघ लोक सेवा आयोग, राज्य के राज्यपाल के अनुरोध पर, राष्ट्रपति के अनुमोदन से राज्य की सभी या किसी भी अपेक्षा को पूरा करेगा।

सदस्यता

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 316 के अनुसार संघ लोक सेवा आयोग या संयुक्त आयोग के मामले में लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष तथा अन्य सदस्यों की नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा और राज्य लोक सेवा आयोग के मामले में राज्य के राज्यपाल द्वारा की जाती है। इस बात का भी प्रावधान रखा गया है, कि (जहाँ तक संभव हो) हर लोक सेवा आयोग के आधे सदस्य ऐसे हों, जिन्होंने भारत सरकार या राज्य सरकार के अधीन कम से कम 10 वर्ष तक काम किया हो।

कार्यकाल

संघ लोक सेवा आयोग का सदस्य, सदस्यता–ग्रहण करने की तारीख से छह वर्ष की अवधि तक या संघ लोक सेवा आयोग के मामले में 65 वर्ष की आयु प्राप्त कर लेने तक तथा राज्य लोक सेवा आयोग या संयुक्त आयोग के मामले में 60 वर्ष की आयु तक, इनमें से जो भी पहले हो, आयोग का सदस्य बना रहेगा।

कार्यकाल की अवधि पूरी हो जाने के बाद लोक सेवा आयोग की सदस्यता धारित व्यक्ति उस कार्यालय में पुनः नियुक्ति का पात्र नहीं होगा। संघ लोक सेवा आयोग का अध्यक्ष भारत सरकार या किसी राज्य सरकार में भावी नियोजन का पात्र नहीं होगा। तथापि, राज्य लोक सेवा आयोग का अध्यक्ष अपना कार्य काल पूरा करने के बाद, किसी अन्य नियोजन को छोड़कर संघ लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष या किसी अन्य सदस्य पद पर नियुक्ति के लिए पात्र होगा। इसी प्रकार संघ लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष से भिन्न कोई सदस्य संघ लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष या राज्य लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष पद पर नियुक्ति के लिए पात्र होगा किंतु किसी अन्य नियोजन के लिए पात्र नहीं होगा।

पदच्युति

लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष या किसी सदस्य को राष्ट्रपति के आदेश से हटाया जा सकता है। इसके लिए अनुच्छेद 145 में निर्धारित प्रक्रिया के अनुसरण में कदाचार के लिए उच्चतम न्यायालय द्वारा जाँच करने और दोषी पाए जाने (दोष की पुष्टि हो जाने) की स्थिति में राश्ट्रपति उसे आदेश जारी करके पदच्युत कर सकता है। राष्ट्रपति द्वारा उच्चतम न्यायालय की रिपोर्ट पर समुचित आदेश पारित कर देने तक संघ लोक सेवा आयोग या संयुक्त आयोग के मामले में राष्ट्रपति और राज्य लोक सेवा आयोग के मामले में राज्यपाल अध्यक्ष या आयोग के किसी अन्य ऐसे सदस्य को निलंबित कर सकता है, जिसका मामला उच्चतम न्यायालय में विचाराधीन हो। राष्ट्रपति को आदेश द्वारा, लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष या किसी सदस्य को पदच्युत करने का अधिकार है, यदि वह सदस्यः

i) दिवालिया घोषित हो गया हो, या

ii) अपने कार्यालय के कार्यों से भिन्न किसी सवेतन नियोजन में संलग्न हो, या

iii) मानसिक या शारीरिक अशक्तता के कारण काम करने में अयोग्य हो।

5.3.2 लोक सेवा आयोग के कार्य

अनुच्छेद 320 में यथा निर्दिष्ट, लोक सेवा आयोग के कार्य निम्न अनुसार होंगेः

- संघ और राज्य लोक सेवा आयोगों का यह दायित्व होगा कि वे क्रमशः संघ तथा राज्य सेवाओं संबंधी पद नियुक्तियों के लिए परीक्षाएँ आयोजित करें।
- संघ लोक सेवा आयोग का यह भी दायित्व होगा कि यदि दो या उससे अधिक राज्य किसी ऐसी सेवा के लिए भर्ती संबंधी योजना बनाने और उनके प्रवर्तन में उसकी सहायता की माँग करें, जिसके लिए विशेष योग्यता प्राप्त उम्मीदवार अपेक्षित हों, तो वह इस मामले में उनकी सहायता करेगा।
- संघ लोक सेवा आयोग या राज्य लोक सेवा आयोग, जैसा भी मामला हो, निम्नलिखित मामलों में अपना परामर्श देगा (जिन मामलों में लोक सेवा आयोग का परामर्श लेना जरूरी है) :

  क) सिविल सेवाओं और सिविल पदों के लिए भर्ती की पद्धतियों से संबंधित सभी मामले।

  ख) सिविल सेवाओं और सिविल पदों से संबंधित नियुक्ति करने और एक सेवा से दूसरी सेवा में पदोन्नति तथा स्थानांतरण और ऐसी नियुक्ति, पदोन्नति और स्थानांतरण के लिए उम्मीदवारों की उपयुक्तता पर अनुसरण किए जाने वाले सिद्धांतों पर।

  ग) भारत सरकार या किसी राज्य सरकार के अधीन सिविल हैसियत से सेवारत व्यक्ति को प्रभावित करने वाले सभी अनुशासनात्मक मामले, जिनके अंतर्गत ऐसे मामलों से संबंधित अभ्यावेदन या याचिकाएँ भी शामिल हैं।

  घ) भारत सरकार या राज्य सरकार में सिविल हैसियत से सेवारत या सेवा कर चुके किसी व्यक्ति द्वारा या उसकी ओर से किया गया ऐसा दावा, जिसमें कर्तव्य के निष्पादन में किए गए कार्य या कार्य किए जाने के उद्देष्य के लिए उसके विरुद्ध हुई कानूनी कार्यवाही से अपने बचाव पक्ष में किए गए खर्च के संबंध में भारत की संचित निधि में से या राज्य की संचित निधि में से धनराशि की माँग की गई हो।

  ङ) भारत सरकार या किसी राज्य सरकार के अधीन या भारत में क्राउन के अधीन या भारतीय राज्य की सरकार के अधीन सिविल हैसियत से सेवारत किसी व्यक्ति को दुर्घटना की स्थिति में पेंशन देने संबंधी किसी भी दावे और ऐसे दावों के संबंध में निर्धारित की गई धनराशि से जुड़े मामले।

लोक सेवा आयोग, राष्ट्रपति या राज्य के राज्यपाल द्वारा (जैसा भी मामला हो), उसे भेजे गए किसी भी अन्य मामले पर सलाह भी देगा।

आगे यह उपबंधित है कि अखिल भारतीय सेवाओं और संघ के कार्यों के संदर्भ में अन्य सेवाओं तथा पदों के संबंध में राष्ट्रपति (राज्य के कार्यों के संदर्भ में अन्य सेवाओं तथा पदों के संबंध में राज्यपाल) लोक सेवा आयोग से परामर्श लेगा।

यह उल्लेख करना प्रासंगिक होगा कि पिछड़े वर्ग के नागरिकों के पक्ष में सेवाओं संबंधी पदों पर उसकी नियुक्ति के विषय में या संघ या राज्य के अंतर्गत (अनुच्छेद 335 के अनुसरण में) अनुसूचित जातियों या जनजातियों के सदस्यों के नियुक्ति संबंधी मामलों पर विचार करने की पद्धति के संबंध में लोक सेवा आयोग का परामर्ष अपेक्षित नहीं है।

संसद के (या राज्य के विधानमंडल के) अधिनियम के माध्यम से लोक सेवा आयोग को अतिरिक्त कार्य भी सौंपे जा सकते हैं।

लोक सेवा आयोग को वर्ष भर में किए गए कार्यों की वार्षिक रिपोर्ट राष्ट्रपति के (या स्थिति के अनुसार राज्यपाल के) सम्मुख प्रस्तुत करनी होगी। यह रिपोर्ट संसद के प्रत्येक सदन (या राज्य के विधानमंडल) में प्रस्तुत की जाएगी, जिसके साथ सरकार द्वारा आयोग का परामर्श न मानने वाले मामलों तथा उसके कारणों के विवरण संबंधी एक ज्ञापन संलग्न होगा।

5.4 कर्मचारी चयन आयोग : उत्पत्ति

संघ और राज्य लोक सेवा आयोगों के कार्यों से यह देखा जा सकता है कि वे भारत सरकार तथा राज्य सरकारों के कुल पदों में से मात्र कुछ पदों पर अधिकारियों की भर्ती करते हैं। भारत सरकार में गैर–तकनीकी ग्रेड के पदों पर निम्न स्तर के कर्मचारियों की भर्ती करने संबंधी व्यवस्था को युक्तिसंगत बनाने के उद्देश्यों से कर्मचारी चयन आयोग (Staff Selection Commission) की स्थापना की गई। कर्मचारी चयन आयोग एक संलग्न कार्यालय है।

संसद की प्राक्कलन समिति (Estimates Committee) की सिफारिशों के आधार पर कर्मचारी चयन आयोग की स्थापना की गई। समिति ने अपनी 47वीं रिपोर्ट (1967–68) में कर्मचारी चयन आयोग की स्थापना करने की सिफारिश की थी। इस रिपोर्ट में निम्न ग्रेड के पदों पर कर्मचारियों की भर्ती संबंधी परीक्षाएँ आयोजित करने का दायित्व संघ लोक सेवा आयोग से वापस लेकर इस आयोग को सौंपने का सुझाव शामिल था। संघ लोक सेवा आयोग पर भर्ती संबंधी परीक्षाएँ आयोजित करने के कारण काम का दबाव बढ़ गया था, जिसके फलस्वरूप परीक्षाएँ आयोजित करने और परीक्षा–परिणामों की घोषणा करने में विलंब हो जाता था। इसलिए भारत सरकार के रिक्त पदों और विशेष रूप से निम्न स्तर के पदों पर कर्मचारियों की भर्ती करने में समस्याएँ पैदा हो जाती थीं। यही कारण है कि एक ऐसे अलग निकाय की स्थापना करने की आवश्यकता समझी गई, जिसे निम्न स्तर के कर्मचारियों की भर्ती का काम सौंपा जाए। अंतरिम उपाय के तौर पर सचिवालय प्रशिक्षण स्कूल (Secretariat Training School) में एक 'परीक्षा स्कंध' गठित किया गया, जिसे बाद में 'सचिवालय प्रशिक्षण और प्रबंध संस्थान' (Institute of Secretariat Training and Management) नाम दिया गया।

प्रथम प्रशासनिक सुधार समिति (ARC) ने अपनी कार्मिक प्रशासन संबंधी रिपोर्ट में इस तथ्य की ओर ध्यान आकर्षित किया कि केंद्र तथा राज्य सरकारों के अधिकांश कर्मचारी तृतीय श्रेणी और चतुर्थ श्रेणी से संबंधित होते हैं। आयोग ने विभिन्न कार्यालयों में इन पदों पर प्रवेश स्तर के लिए अपेक्षित अर्हताओं के एकसमान स्वरूप को देखते हुए यह सिफारिश की कि विभिन्न विभागों द्वारा गैर तकनीकी पदों की नियुक्तियों की पूलिंग की जाए और कार्मिक का चयन या तो संयुक्त भर्ती द्वारा किया जाए या नियुक्ति बोर्ड द्वारा किया जाए। इस सिफारिश पर गंभीर विचार के पश्चात् भारत सरकार ने वर्ष 1975 में एक 'अधीनस्थ चयन आयोग' (Subordinate Selection Commission) की स्थापना का निर्णय लिया। इसे बाद में 'कर्मचारी चयन आयोग' (Staff Selection Commission) का नाम दिया गया जो जुलाई 1976 से गतिशील हुआ।

5.4.1 कर्मचारी चयन आयोग की संरचना

कर्मचारी चयन आयोग में एक अध्यक्ष, एक सचिव और दो सदस्य शामिल होते हैं। आयोग का मुख्यालय नई दिल्ली में है। आयोग का नेटवर्क नौ क्षेत्रीय कार्यालयों में फैला हुआ है। ये कार्यालय इलाहाबाद, मुंबई, कोलकाता, दिल्ली, गुवाहाटी, बंगलुरु और चेन्नई में स्थित

हैं। आयोग के दो उप–क्षेत्रीय केंद्र भी हैं, जो रायपुर और चंडीगढ़ में स्थित हैं। क्षेत्रीय केंद्र का अध्यक्ष 'क्षेत्रीय निदेषक' होता है और उप–क्षेत्रीय केंद्र का उप निदेशक।

कर्मचारी चयन आयोग ने बाद में, पद संबंधी अपेक्षाओं और उम्मीदवारों की उपलब्धता को देखते हुए कुछ विशिष्ट पदों की विशिष्ट श्रेणियों या समूहों के संदर्भ में अनिवार्य और वांछनीय अर्हताओं की समीक्षा करने और उन अर्हताओं को सुधारने या नया रूप देने में मंत्रालयों/विभागों/संगठनों का परामर्श देने की नई भूमिका ग्रहण की है। साथ ही जिन क्षेत्रों में पर्याप्त संख्या में अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों के उम्मीदवार उपलब्ध हैं, वहाँ आयोग ने अपने अथक परिश्रम से अपनी परीक्षाओं को लोकप्रिय बनाया है और अब उन क्षेत्रों से इन वर्गों के अनेक उम्मीदवार इन परीक्षाओं में हिस्सा लेने लगे हैं।

यह अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों के उम्मीदवारों के लिए शिक्षण–सामग्री तथा शिक्षण–व–मार्गदर्शन केंद्रों आदि के माध्यम से भर्ती–पूर्व प्रशिक्षण कार्यक्रम की व्यवस्था करके एक उत्प्रेरक अभिकरण की भूमिका निभाता है। आयोग शारीरिक रूप से अक्षम लोगों के लिए रिक्त (आरक्षित) पदों को भरने के लिए भी विशेष भर्ती अभियान (विशेष परीक्षा) चलाता है।

कर्मचारी चयन आयोग द्वारा परीक्षाएँ आयोजित करने और उम्मीदवारों के चयन के लिए अपनाई गई कार्यविधियाँ और प्रक्रियाएँ संघ लोक सेवा आयोग द्वारा इस संदर्भ में दशकों से अपनाई गई प्रणाली पर आधारित है।

5.4.2 कर्मचारी चयन आयोग की भूमिका और कार्य

कर्मचारी चयन आयोग का प्रमुख कार्य परिक्षायें और साक्षात्कार आयोजित करना होता है, जहाँ भी आवश्यक पदों पर भर्ती के लिए पद दायरे में हो।

कर्मचारी चयन आयोग भारत सरकार की सबसे बडी भर्ती एजेंसियों में से एक है। एस.एस. सी. को भारत सरकार के विभिन्न मंत्रालयों/विभागों और उनसे सलंग्न और अधीनस्थ कार्यालयों में सभी समूह 'बी' (गैर–राजपत्रित) और समुह 'सी' (गैर–तकनीकी) पदों पर भर्ती करने के कार्य के साथ अनिवार्य किया गया है, वे पद जो विशेष रूप से आयोग के कार्यक्षेत्र से छूट गए है। इसके अतिरिक्त, वर्ष 2016 से आयोग को भारत लेखा परीक्षा और लेखा विभाग (जीओआई–2018) के लिए सहायक लेखा अधिकारी और सहायक लेखा परीक्षा अधिकारी के समूह 'बी' (राजपत्रित) पदों पर भर्ती करने की अतिरिक्त जिम्मेदारी सौंपी गई है।

आयोग भर्ती संबंधी तीन भिन्न प्रक्रियाओं का अनुपालन करता है:

1) लिखित परीक्षा के माध्यम से भर्ती, जिसमें प्रारंभिक भर्ती (प्रारंभिक प्रविष्टि का स्तर) के समय व्यक्तित्व संबंधी विशेषताओं को अधिक महत्व नहीं दिया जाता (जैसा निम्न श्रेणी लिपिक, अवर श्रेणी लिपिक, लेखा परीक्षक, आशुलिपिक आदि)।

2) लिखित परीक्षा और साक्षात्कार के माध्यम से भर्ती, जिसमें प्रारंभिक भर्ती के समय भी व्यक्तित्व संबंधी विशेषताओं को महत्व दिया जाता है (जैसे आयकर और केंद्रीय उत्पाद षुल्क निरीक्षक, दिल्ली पुलिस और केंद्रीय अन्वेशण ब्यूरो के उप–निरीक्षक आदि।)

3) साक्षात्कार के माध्यम से भर्ती, जहाँ अखिल भारतीय स्तर की परीक्षा अपेक्षित न हो, परंतु यदि आवश्यक हो तो निपुणता और विशेषता संबंधी जाँच करना।

कर्मचारी चयन आयोग की नीतियों और कार्यक्रमों का कार्यान्वयन, इसके क्षेत्र कार्यों का पर्यवेक्षण, राज्य सरकारों और उनके विभागों के साथ संपर्क एवं संबंध बनाना, निष्पक्ष और सुचारु ढंग से परीक्षाएँ आयोजित करवाने की व्यवस्था करना, साक्षात्कार बोर्डों की सहायता करना तथा अपने कार्यक्षेत्र के भीतर आने वाले परीक्षा केन्द्रों को सेवाएँ प्रदान करना क्षेत्रीय/उप–क्षेत्रीय कार्यालयों का प्रमुख दायित्व है।

बोध प्रश्न 3

टिप्पणी: i) अपने उत्तरों के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ii) इकाई के अंत में दिए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

1) कर्मचारी चयन आयोग के विकास की व्याख्या कीजिए।

.....

.....

.....

.....

2) कर्मचारी चयन आयोग की संरचना तथा कार्यों की चर्चा कीजिए।

.....

.....

.....

.....

5.5 निष्कर्ष

इस इकाई में हमने केंद्रीय कार्मिक अभिकरण के विकास और महत्व के संबंध में चर्चा की। ये अभिकरण नीति निर्धारण से लेकर अन्य संवर्धनात्मक तथा विकासात्मक कार्यक्रमों तक सभी कार्मिक गतिविधियों के लिए जिम्मेदार है। इस इकाई में कार्मिक विभाग के कार्यों पर प्रकाश डाला गया है। यह विभाग वर्ष 1970 में केंद्रीय कार्मिक अभिकरण के रूप में स्थापित किया गया और बाद में वर्ष 1977 में कार्मिक, लोक शिकायत और पेंशन मंत्रालय बन गया। यह इकाई मुख्य रूप से भारत के लोक सेवा आयोग के विकास और कार्यों से संबंधित है, जो सिविल अधिकारियों की भर्ती तथा सिविल सेवा के अन्य मामलों के लिए जिम्मेदार हैं। हमने लोक सेवा आयोग की परामर्शदायी भूमिका की भी चर्चा की है। साथ ही उन उपायों का भी विश्लेषण किया है जो सरकार द्वारा संघ लोक सेवा आयोग के परामर्श की संभावित उपेक्षा के संबंध में संविधान में उपबंधित हैं। संघ और राज्य लोक सेवा आयोगों की स्थापना के अलावा वर्ष 1976 में कर्मचारी चयन आयोग का भी गठन किया गया, जिसे सरकार के मध्य–स्तरीय और गैर–तकनीकी श्रेणी के अधीनस्थ कर्मचारियों की भर्ती संबंधी दायित्व सौंपा हुआ है। इस इकाई में कर्मचारी चयन आयोग के कार्यों और भूमिका का भी विवेचन किया गया है।

5.6 शब्दावली

नए विचारों की फीडर लाइन (Feederline of New Ideas) : एक ऐसा माध्यम, जिससे विचारों को मुख्य प्रणाली तक सफलतापूर्वक पहुँचाया जा सके।

दिवालिया (Insolvent) : ऐसा व्यक्ति, जिसके पास ऋण लौटाने के लिए पर्याप्त धन, माल या संपत्ति न हो।

ली आयोग (Lee Commission) : 1923 में लार्ड ली की अध्यक्षता में गठित आयोग जिसे भारत में उच्च सिविल सेवा संबंधी रॉयल आयोग के नाम से भी जाना जाता है।

5.7 संदर्भ लेख

Arora, Ramesh K and Rajni Goyal, 2013, *Indian Public Administration: Institutions and Issues* (Third Edition), New Age Publishers, Jaipur.

Dey, Bata, K.1977, *Bureaucracy Development and Public Management in India,* Uppal Publishing House, New Delhi.

Felix A, Nigro, 1963, *Public Personnel Administration,* Holt, New York.

Government of India, Administrative Reforms Commission, 1967, *Personnel Administration - Report of the Study Team,* Manager of Publications, Delhi.

Government of India, Administrative Reforms Commission, 1968. *Report on Machinery on the Government of India and its Procedures of Work,* Manager of Publications, Delhi.

Goel, S.L. 1984, *Public Personnel Administration,* Sterling Publishers, New Delhi.

Hazarika, Niru, 1979, *Public Service Commission: A Study,* Leela Devi Publications, Delhi.

Lok Sabha (Third) 1966, *Estimates Committee; 93rd Report - Public Services,* Lok Sabha Secretariat, New Delhi.

Sabharwal N.K. 1980. *Structure and Functions of Central Personnel Agencies in India, Asian Civil Services Technical Papers* Vol. 5, Asian & Pacific Development Centre, Kuala Lumpur.

Stahl. O. Glenn, 1983. *Public Personnel Administration* (8th edition), Harper and Row Publishers, New York.

Verma S.P and S.K. Sharma, 1985, *Managing Public Personnel Systems,* Indian Institute of Public Administration, New Delhi.

5.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) आपके उत्तर में निम्नलिखित बातें शामिल होनी चाहिए:

- कार्मिक और प्रशिक्षण विभाग (DOPT)

- पेंशन और पेशनभोगी कल्याण विभाग (DOP & PW)
- प्रशासनिक सुधार और लोक शिकायत विभाग (DARPG)

2) आपके उत्तर में निम्नलिखित बातें शामिल होनी चाहिए:

- मंत्रालय प्रशासनिक सतर्कता, प्रशिक्षण, कर्मचारी कल्याण, प्रशासनिक सुधार, लोक शिकायत और पेंशन सहित कार्मिक प्रशासन के संबंध में नीति निर्माण करने और इन गतिविधियों के समन्वय के लिए जिम्मेदार है।
- भारतीय प्रशासनिक सेवा और केंद्रीय सचिवालय सेवा पर नियंत्रण रखना।

बोध प्रश्न 2

1) आपके उत्तर में निम्नलिखित बातें शामिल होनी चाहिए:

- भारत सरकार अधिनियम 1991 की सिफारिश, जिसमें पहली बार लोक सेवा आयोग के गठन की आवश्यकता स्वीकार की गई।
- लोक सेवा आयोग के गठन के संबंध में ली आयोग की सिफारिश।
- वर्ष 1936 में लोक सेवा आयोग का गठन।

2) आपके उत्तर में निम्नलिखित बातें शामिल होनी चाहिए:

- कर्मचारी चयन आयोग में एक अध्यक्ष सचिव और दो सदस्य होते हैं और इसका मुख्यालय नई दिल्ली में है। इसका नौ क्षेत्रीय केन्द्रों का नेटवर्क है।
- अवर श्रेणी लिपिक ग्रेड, ग्रेड सी और ग्रेड डी आशुलिपिकों के लिए सीमित विभागीय प्रतियोगिता परीक्षाएँ आयोजित करना।

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

इकाई 6 केंद्रीय और राज्य प्रशिक्षण संस्थान

इकाई की रूपरेखा

6.0 उद्देश्य

6.1 प्रस्तावना

6.2 प्रशिक्षण : महत्व

6.3 प्रशिक्षण के प्रकार

6.3.1 आधार प्रशिक्षण

6.3.2 सेवा में प्रवेश पर प्रशिक्षण

6.3.3 सेवाकालीन प्रशिक्षण

6.4 केंद्रीय प्रशिक्षण संस्थान

6.5 राज्य प्रशिक्षण संस्थान

6.6 राज्य प्रशिक्षण संस्थानों के कार्य

6.7 निष्कर्ष

6.8 शब्दावली

6.9 संदर्भ लेख

6.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

6.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप:

- प्रशिक्षण के महत्व पर प्रकाश डाल सकेंगे;
- केंद्रीय प्रशिक्षण संस्थानों द्वारा दिए गए विभिन्न प्रकार के प्रषिक्षणों का वर्णन कर सकेंगे;
- राज्य प्रशिक्षण संस्थानों के कार्यों की व्याख्या कर सकेंगे; और
- उन विभिन्न उपायों की चर्चा कर सकेंगे जिन्हें राज्य में राज्य प्रशिक्षण संस्थान को नोडल प्रशिक्षण एजेंसी बनाने के लिए अपनाया जा सकता है।

6.1 प्रस्तावना

मानव संसाधन विकास के लिए प्रशिक्षण एक महत्वपूर्ण निवेश है। इसे शिक्षण और अधिगम के पारस्परिक आदान–प्रदान की प्रक्रिया के रूप में देखा जा सकता है। ज्ञानार्जन और इससे संबंधित कार्य प्रणाली को समझने के लिए यह एक माध्यम है। प्रशिक्षण मानव परिसम्पत्ति के विशिष्ट महत्व पर बल देता है जो अपेक्षित दिशा–विन्यास और ज्ञान प्रदान किए जाने पर भौतिक और वित्तीय सम्पत्तियों आदि अन्य सम्पत्ति की अपेक्षा अधिक चिरकालिक हो सकती है, क्योंकि भौतिक और वित्तीय सम्पत्तियाँ एक समयकाल के उपरांत घटने लगती हैं। कार्मिकों की अपर्याप्तता उनके प्रशिक्षण की न्यूनता से सीधी तरह सम्बद्ध है और यदि व्यापक रूप से देखा जाए तो सरकारी प्रशासन में मानव संसाधन में वृद्धि करने के लिए यही

*यह इकाई बी.पी.ए.ई–104, खंड 3 से ली गई है।

एक वास्तविक उपाय है। इस कमी को पूरा करने के लिए सर्वाधिक व्यावहारिक और प्रभावी तरीका संगठन में व्यक्तियों की संख्या में वृद्धि करना नहीं है बल्कि सही तरीका यह है कि दक्ष और सुविज्ञ कार्मिक (प्रशासनिक, प्रबंधकीय, व्यावसायिक और तकनीकी) उपलब्ध कराने के लिए यथासंभव शीघ्र प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित किए जाएँ।

अतः प्रशिक्षण के महत्व को ध्यान में रखकर और इसे एक संगठित, सुव्यवस्थित और एक व्यापक गतिविधि बनाने के लिए भारत में स्वतंत्रता के पश्चात् राष्ट्रीय और राज्य दोनों ही स्तरों पर अनेक प्रशिक्षण संस्थान स्थापित किए गए हैं। ये संस्थान विविध प्रकार के प्रशिक्षण कार्यक्रमों को चलाते हैं। जैसे आधार प्रशिक्षण, कार्य पर और सेवाकालीन प्रशिक्षण आदि। इस इकाई में हम प्रशिक्षण की विभिन्न भूमिकाओं, केंद्रीय और राज्य प्रशिक्षण संस्थानों के महत्व के साथ–साथ संस्थानों द्वारा आयोजित विभिन्न प्रशिक्षण कार्यक्रमों के स्वरूप के बारे में अध्ययन करेंगे। इसमें राज्य में प्रशिक्षण के लिए नोडल एजेंसी के रूप में राज्य प्रशिक्षण संस्थान की भूमिका पर भी प्रकाश डाला गया है।

6.2 प्रशिक्षण : महत्व

प्रशिक्षण एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके माध्यम से कर्मचारियों के मन में चिंतन और कर्म की उपयुक्त आदतें डाली जाती हैं तथा आवश्यक दक्षता, ज्ञान और अभिवृत्ति का विकास किया जाता है। कर्मचारियों को इस योग्य बना देना प्रशिक्षण का चरम उद्देश्य है कि वे अपने वर्तमान और भावी कार्यों को प्रभावी रूप से कर सकें। आइए, अब हम प्रशिक्षण की विभिन्न भूमिकाओं की चर्चा शुरू करे।

कार्य–निष्पादन के लिए एक बुनियादी निवेश

सरकारी सेवा में योग्य व्यक्ति को भर्ती कर लेना मात्र ही पर्याप्त नहीं है। उन्हें उस संगठन के विविध लक्ष्यों और उद्देश्यों के संबंध में प्रशिक्षित करना भी अनिवार्य है जिसमें वे कार्यरत हैं। उन्हें विभिन्न कार्यकलापों के निष्पादन के लिए तकनीकी, वैचारिक और मानवीय कौशल प्रदान करना भी अनिवार्य है। यदि प्रशिक्षण नहीं प्रदान किया जाता तो शायद ये कौषल प्रयत्न और त्रुटि प्रणाली (Trial and Error) द्वारा अथवा अनुभव के द्वारा अंशतः अर्जित किए जा सकते है जो संगठन और जनहित में हानिकारक सिद्ध हो सकते हैं।

अभिवृत्तिक परिवर्तन में सहायक

प्रशिक्षण सरकारी सेवा में प्रवेश करने वाले कर्मचारियों को इस योग्य बना देता है ताकि वे संगठन में उनके द्वारा किए जाने वाले कार्यों के उद्देश्यों से परिचित हो जाएँ। प्रशिक्षण उन्हें यह अहसास भी कराता है कि उन्हें अपने कार्यों के माध्यम से समाज में कुछ योगदान करना है। इस प्रकार प्रशिक्षण उन्हें अपने कार्यों की भूमिका और महत्व के प्रति जागरूक बनाता है। प्रशिक्षण व्यक्ति को इस योग्य भी बना देता है ताकि वह समय और लागत के संबंध में सही अभिवृत्ति विकसित कर सके। इससे कार्य के जल्दी निपटारे की भावना का विकास भी होता है।

अधिक उत्पादकता के साधन के रूप में प्रषिक्षण

प्रशिक्षण, कार्य की विशिष्टताओं में निपुणता का विकास करता है। इससे कार्मिकों में आत्मविश्वास का निर्माण होता है, और इससे कार्य–निष्पादन में उनकी रुचि एवं क्षमता में वृद्धि होती है।

कार्य के जटिल, विस्तृत और बहु–अनुशासनिक स्वरूप के वर्तमान संदर्भ में प्रशिक्षण की आवश्यकता और भी अधिक महत्वपूर्ण हो गई है। देश के सामाजिक–आर्थिक विकास के लिए योजनाओं और कार्यक्रमों के कार्यान्वयन, ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में गरीबी उन्मूलन तथा बढ़ती हुई जनसंख्या की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए, रोज़गार के अवसर पैदा करने के लिए सरकारी विभागों में कार्यरत कार्मिकों को समय और ध्यान तथा समुचित कौशलों के संदर्भ में पर्याप्त रूप से खुद को शामिल करने की आवश्यकता होती है। विकास प्रशासन के लक्ष्यों की प्राप्ति में प्रशिक्षण की भूमिका का महत्व न केवल कार्मिकों के विकास और कार्य की निपुणता के लिए ज्ञान प्रदान करने में है बल्कि उनकी अभिवृत्ति और मूल्यों में परिवर्तन लाने के संबंध में भी है।

शिक्षण की प्रक्रिया के रूप में प्रशिक्षण कार्य को सतत रूप से चलाना होता है क्योंकि विकास और आधुनिकीकरण की आवश्यकताओं को किसी एक समय विशेष में कार्मिकों को प्रशिक्षण देकर पूरा नहीं किया जा सकता। प्रशिक्षण को प्रभावी बनाने के लिए उसे एक तदर्थ प्रयोग न मानकर एक सतत जारी रहने वाली गतिविधि माना जाना चाहिए।

6.3 प्रशिक्षण के प्रकार

भारत में प्रत्येक प्रशिक्षण संस्थान अद्भुत है क्योंकि प्रषिक्षण संस्थान किसी एक विषय अथवा क्षेत्र विशेष की विशिष्ट समस्याओं और प्राथमिकताओं के संबंध में खुद को सीमित रखता है। प्रत्येक संस्थान अपने–अपने सेवार्थियों अथवा लक्ष्य समूह की आवष्यकताओं की पूर्ति करते हैं जिनको वे प्रशिक्षण देते हैं और यही संस्थान के कार्य संचालनों का निर्धारण करता है। आइए, अब हम विभिन्न प्रशिक्षण संस्थानों द्वारा आयोजित किए जाने वाले प्रशिक्षण कार्यक्रमों के विविध प्रकारों की विस्तार से चर्चा करें।

6.3.1 आधार प्रशिक्षण

सिविल सेवा परीक्षा पास करके इन सेवाओं में चयनित प्रत्याशियों को एक सामान्य प्रशिक्षण देने की आवश्यकता होती है। इस प्रकार के प्रशिक्षण का मूल उद्देश्य यह होता है कि इसमें सिविल सेवकों की उस शैक्षणिक पृष्ठभूमि और विषयों पर ध्यान नहीं दिए बिना उन्हें प्रशासन के मूलभूत तत्वों, देश की आधारभूत सामाजिक–आर्थिक वास्तविकताओं, राजनीतिक परिवेश, सरकार की विचारधारा, अंतर–संबंधों की संपूर्ण प्रणाली, सरकार के विभिन्न अंगों और अभिकरणों के बीच तथा नागरिकों और प्रशासन के बीच पारस्परिक निर्भरता आदि के बारे में अवगत कराया जाता है। इस प्रकार के प्रशिक्षण की अवधारणा यह भी है कि उनमें सौहार्द का सखापन (Camaraderie) भाव विकसित हो और वे सिविल सेवा की एक मित्रमंडली (कामरेडशिप) बनाएँ जो उनके लिए आगे के उस कैरियर में सहायक सिद्ध होगी, जब वे भारत सरकार के विभिन्न विभागों में मिलकर कार्य करेंगे। इस प्रकार के प्रशिक्षण को "परिसरकालीन प्रशिक्षण" (On Campus Training) माना जाता है। इस प्रकार का प्रशिक्षण एक ही परिसर में दिया जाता है, जहाँ एक–सा वातावरण, एक–सा परिवेश होता है जिससे उनमें एक साथ रहने, एक–दूसरे को समझने और मिलकर कार्य करने का भाव उत्पन्न हो। इन्हीं उद्देश्यों को ध्यान में रखकर वर्ष 1959 में सिविल सेवकों के लिए आधार प्रशिक्षण कार्यक्रम तैयार किया गया था। इस कार्यक्रम के अंतर्गत संयुक्त प्रतियोगी/सिविल सेवा परीक्षा के माध्यम से भर्ती भारतीय प्रशासनिक सेवा के और अन्य गैर–तकनीकी सेवाओं में चयनित प्रत्याशियों को प्रशिक्षण के लिए वर्ष 2008 से लाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय प्रशासन

अकादमी (Lal Bahadur Shastri National Academy of Administration), मसूरी, डॉ. एम.सी.आर.एच.आर.डी. संस्थान, आन्ध्र प्रदेश (Dr. MCRHRD Institute of Andhra Pradesh), आर.सी.वी.पी., नौरोन्हा प्रशासन अकादमी, भोपाल (RCVP Noronha Academy of Administration, Bhopal) व एन.ऐ.डी.टी., नागपुर (NADT, Nagpur) भेजा जाने लगा है।

बाद में यह आधार प्रशिक्षण (Foundational Training) भारतीय रेलवे सेवा, केंद्रीय इंजीनियरिंग सेवा (सड़क) आदि जैसी उच्च तकनीकी सेवाओं के लिए चयनित प्रत्याशियों को भी दिया जाने लगा। इस प्रकार का आधार प्रशिक्षण कार्मिक विकास के व्यावसायिक पहलुओं से भी संबद्ध है क्योंकि यह कौशल निर्माण, विशिष्ट क्षमता के संवर्धन और एक विशेष कार्य–केन्द्रित दक्षता में सुधार करने से संबद्ध है। इस प्रकार का प्रशिक्षण व्यावसायिक प्रशिक्षण संस्थानों, स्टाफ कालेजों आदि में आयोजित किया जाता है। यह प्रशिक्षण कार्य के दौरान अथवा कार्यस्थल पर विषय निष्ठ शिक्षण द्वारा भी दिया जाता है। यह प्रशिक्षण भी अनिवार्यतः "सेवा में प्रवेश पर" दिए जाने वाले प्रशिक्षण जैसा होता है और यह उस "सेवाकालीन" अथवा "पुर्नचर्या" प्रशिक्षण से भिन्न होता है जिसका उद्देश्य पुराने कौशलों को अद्यतन बनाना अथवा निष्पादित किए जाने वाले कार्यों से संबद्ध नया कौशल प्रदान करना होता है। पहली बार प्रशिक्षण ले रहे चयनित प्रत्याशियों को व्यावसायिक कार्यों से संबंधित आधार प्रशिक्षण में, कार्य करने का उन्नत तरीका बताने और कार्य की नई तकनीकी जानकारी देने के अलावा किसी विशिष्ट सेवा की सामाजिक–सांस्कृतिक गतिविधियों पर भी जोर दिया जाता है।

6.3.2 सेवा में प्रवेश पर प्रशिक्षण

यह प्रशिक्षण, (On-entry Training) "सेवा प्रवेशोत्तर प्रशिक्षण" (Post-entry training) भी कहलाता है। यह विभिन्न रूपों, अभिविन्यास, प्रवेश तथा कार्य के दौरान दिया जा सकता है। यह "सेवा प्रवेश प्रशिक्षण" बाद के कैरियर कार्यक्रमों अथवा उस "सेवाकालीन प्रशिक्षण" से भिन्न होता है। कैरियर कार्यक्रम या सेवाकालीन प्रशिक्षण, कर्मचारियों को उनके कैरियर काल के दौरान अथवा 'परिपक्व काल' (Maturation Stage) अर्थात् कैरियर के उच्च / वरिष्ठ काल में दिया जाता है। सेवाकाल के दौरान दिया जाने वाला यह प्रशिक्षण, पुनश्चर्या प्रशिक्षण, पुनर्प्रशिक्षण, प्रबंधकीय प्रशिक्षण (प्रबंधन विकास कार्यक्रम), कार्यपालक विकास कार्यक्रम आदि जैसे अनेक रूपों में दिया जा सकता है। इनके बारे में आप बाद में अध्ययन करेंगे। "सेवा में प्रवेश के समय प्रशिक्षण" में प्रवेश का समय महत्वपूर्ण होता है, क्योंकि इसमें नए कार्य के लिए चयनित प्रत्याशियों को तैयार किए जाते हैं। यह ऐसा प्रशिक्षण है जो भर्ती होने के बाद और कोई कार्य सौंपने से पूर्व दिया जाता है। "सेवा में प्रवेश पर प्रशिक्षण" को निम्नलिखित चरणों में विभाजित किया जा सकता है:

अभिविन्यास (Orientation)

सामान्यतः सेवा के प्रथम कुछ दिनों अथवा सप्ताहों में सरकारी नियोजन का एक सामान्य परिचय दिया जाता है। एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें कार्य के माहौल अर्थात् संगठनात्मक ढाँचे, उसके लक्ष्यों और उद्देश्यों, तथा कर्मचारियों के अधिकारों और कर्त्तव्यों आदि की जानकारी दी जाती है।

आगमनात्मक प्रशिक्षण (Induction Training)

यह प्रशिक्षण, एक प्रकार से प्रवेषोत्तर प्रशिक्षण तो है किंतु अभिविन्यास से भिन्न है। आगमनात्मक प्रशिक्षण में उन कार्यों के निष्पादन के संबंध में अनुदेश (सरकारी सेवा प्रारंभ

करने के समय) होते हैं जो किन्ही विशेष पदों तथा किसी संवर्ग अथवा सेवा में कुछ विशिष्ट ग्रेड के कर्मचारियों के कर्त्तव्यों से संबंधित होते हैं। आगमनात्मक प्रशिक्षण में एक विशिष्ट कार्य केंद्रित केंद्र–बिंदु होता है और इसमें प्रारंभिक नियुक्ति के तुरंत बाद सामान्यतः कई सप्ताह अथवा महीनों तक औपचारिक अनुदेशों का प्रशिक्षण दिया जाता है। इसका मुख्य उद्देश्य कार्य के मूल तत्वों, उसकी विषयवस्तु, प्रक्रिया, नियम और विनियम आदि के बारे में व्यक्तियों की शिक्षा प्राप्त करने की प्रक्रिया की गति को तेज करना है।

आगमनात्मक प्रशिक्षण अखिल भारतीय सेवाओं और केंद्रीय एवं तकनीकी सेवाओं के चयनित प्रत्याशियों को उनके अपने विभागों में, उन्हें स्वतंत्र प्रभार दिए जाने से पूर्व और परिवीक्षा अवधि के अंतिम चरण में दिया जाता है। उदाहरण के लिए, दिल्ली स्थित सचिवालय प्रबंध और प्रशिक्षण संस्थान (जो एक केंद्रीय प्रशिक्षण संस्थान भी है) केंद्रीय सचिवालय सेवा और भारतीय विदेश सेवा (बी) के अनुभाग अधिकारियों के लिए आगमनात्मक प्रशिक्षण का आयोजन करता है और उन्हें सरकारी प्रक्रियाओं, टिप्पणी और मसौदा लेखन आदि की ओर उन्मुख करता है। साथ ही यह केंद्रीय सचिवालय और संसद के संगठनात्मक ढाँचे के बारे में भारतीय आर्थिक सेवा और भारतीय सांख्यिकीय सेवा में सीधे भर्ती किए गए सदस्यों को प्रशिक्षण देने का भी कार्य करता है। विभिन्न केंद्रीय प्रशिक्षण संस्थानों में इस प्रकार के पाठ्यक्रम नियमित रूप से चलाए जाते हैं।

कार्य करते समय प्रशिक्षण (On-the-Job Training)

इस प्रकार का प्रशिक्षण इस आधार–वाक्य पर आधारित है कि किसी व्यक्ति का सबसे उत्तम शिक्षण कार्य पर होता है। यह "प्रयत्न और त्रुटि विधि" (Trial and Error) अथवा कार्य के अनौपचारिक व्यावहारिक परिचय के माध्यम से अथवा संगठन के प्रथम श्रेणी के पर्यवेक्षक या अन्य वरिष्ठ अनुभवी व्यक्तियों की निगरानी में "कार्य करते समय सीखने" से संबंधित है। यह पूर्णतः कार्य केंद्रित प्रशिक्षण है अर्थात् यह एक ऐसा प्रशिक्षण होता है जो निष्पादित किए जा रहे कार्य के स्वरूप और कार्यस्थल से संबंधित होता है।

सामाजिक–आर्थिक, प्रौद्योगिकीय और शैक्षणिक क्षेत्रों में हो रही तीव्र गति से हो रही उन्नति के कारण यह अत्यावश्यक हो गया है कि कार्मिकों के ज्ञान को अद्यतन बनाया जाए और वे विशेषीकरण अर्जित करें। अतः 'प्रारंभिक प्रशिक्षण' और 'कार्य करते समय प्रशिक्षण' को कर्मचारियों के कैरियर के विभिन्न चरणों में दिए जाने वाले सेवाकालीन प्रशिक्षण द्वारा अनुपूरित किए जाने की आवश्यकता है। यह किसी भी कर्मचारी को इस योग्य बना देता है कि वह अद्यतन आवश्यक कुशलता और ज्ञान अर्जित कर सके और उसमें कार्य के बढ़ते दायित्वों को निभाने की क्षमता पैदा हो। अब हम सेवाकालीन प्रशिक्षण के महत्व और उसके विभिन्न प्रकारों के संबंध में चर्चा करेंगे।

6.3.3 सेवाकालीन प्रशिक्षण

सेवाकालीन प्रशिक्षण (In-Service Training) ऐसा प्रशिक्षण है जो कर्मचारियों को कैरियर के मध्यकाल में अथवा उसके भी बाद में किसी चरण में दिया जाता है। अतः इस प्रशिक्षण को कैरियर के मध्यकाल (बाद के समय) में दिया जाने वाला प्रशिक्षण भी कहा जाता है। स्टाफ का विकास एक सतत प्रक्रिया है और संगठनात्मक प्रभावशीलता में योगदान करने वाला यह एक महत्वपूर्ण तत्व है। सेवाकालीन प्रशिक्षण के पीछे आधारभूत धारणा यह है कि चूँकि कर्मचारियों को पदभार ग्रहण करते समय दिया जाने वाला बुनियादी अथवा प्रारंभिक प्रशिक्षण उनके संपूर्ण कैरियर के लिए पर्याप्त नहीं होता इसलिए उन कर्मचारियों में नवीन ज्ञान, नवीनतम कौशल, बेहतर अभिवृत्ति और आचरण उत्पन्न करने की आवश्यकता है ताकि

वे तेज गति से बदलती प्रौद्योगिकी और प्रशासनिक माहौल का सामना करने के लिए सक्षम बन सकें। यह सुसंगत चिंतन करने और किसी समस्या का समाधान करने की योग्यता के विकास पर बल देता है जिससे उनके कार्य–निष्पादन स्तर में वृद्धि होती है।

सिविल सेवकों को विभिन्न प्रशिक्षण संस्थानों के द्वारा प्रशिक्षण दिया जाता है। प्रशिक्षण के बारे में युगंधर समिति की रिपोर्ट (2003) के परिणामस्वरूप अखिल भारतीय सेवाओं के सदस्यों के लिए कैरियर मध्य स्तर पर सेवाकालीन प्रशिक्षण शुरु किया गया। आई.ए.एस. अधिकारियों को सेवाकालीन प्रशिक्षण देने के लिए नई दिल्ली स्थित भारतीय लोक प्रशासन संस्थान (आई.आई.पी.ए.), हैदराबाद स्थित ग्रामीण विकास और पंचायत राज संस्थान, तथा हैदराबाद के ही भारतीय प्रशासनिक स्टाफ कॉलेज जैसे कई प्रशिक्षण संस्थान हैं।

जैसी कि हमने इस इकाई में पहले चर्चा की थी कि सेवाकालीन प्रशिक्षण या तो पुनश्चर्या पाठ्यक्रम, पुनः प्रशिक्षण प्रबंध प्रशिक्षण आदि के रूप में दी जाती है। आइए, इनपर क्रमशः विचार करें।

पुनश्चर्या पाठ्यक्रम (Refresher Courses)

कर्मचारियों को उनके व्यावसायिक क्षेत्राधिकार अथवा कार्यात्मक क्षेत्रों अथवा व्यावसायिक विशेषज्ञताओं में अक्सर बार–बार प्रशिक्षण दिया जाता है। कई बार कर्मचारी अपने रोजमर्रा के कामों में व्यस्त रहने की वजह से स्वयं को नियमित रूप से अद्यतन नहीं रख पाते। ऐसा विशेषकर चिकित्सा, कृषि, इंजीनियरिंग, विज्ञान और अन्य संबंधित व्यावसायिक क्षेत्रों जैसे तकनीकी पेशों में होता है। इसलिए इस प्रकार के पाठ्यक्रमों का मूल उद्देश्य कर्मचारियों के उस ज्ञान और कौशल का नवीकरण करना होता है जो उन्होंने अपने कैरियर के प्रारंभ में प्राप्त किया था अथवा उनके कौशल को बढ़ाना अथवा उन्हें नए विषयों की जानकारी देना होता है। पुनश्चर्या पाठ्यक्रमों को ज्ञान, कौशल और अनुभव को सुदृढ़ करने वाला माना जाता है।

कार्मिक, लोक शिकायत और पेंशन मंत्रालय ने वर्ष 1985 में कनिष्ठ, मध्य और वरिष्ठ स्तर के भारतीय प्रशासनिक सेवा के सभी अधिकारियों के लिए एक सप्ताह के पुनश्चर्या पाठ्यक्रम में भाग लेना अनिवार्य बना दिया। इस प्रकार के पाठ्यक्रमों में कनिष्ठ से वरिष्ठ स्तर तक के अधिकारियों के बीच अंतःक्रिया के लिए ऊर्ध्वस्तर सहभागिता आवश्यक थी ताकि जो नीतियाँ बनाते हैं और जो उन्हें कार्यान्वित करते हैं तथा प्रतिभागी नीति आयोजन करने और कार्यक्रम का कार्यान्वयन करने संबंधी अनुभवों का आदान–प्रदान कर सकें।

पुनःप्रशिक्षण (Re-training)

प्रशिक्षण की कुछ भिन्न पर कुछ हद तक संबद्ध अवधारणा 'पुनः प्रशिक्षण' में पाई जाती है। कम से कम इसमें विशेषीकरण के एक नए क्षेत्र में अनुदेश देना अथवा विशेषीकरण के पुराने क्षेत्र में गहन प्रशिक्षण देना शामिल होगा। आम तौर पर, पुनःप्रशिक्षण तभी दिया जाता है जब किसी कर्मचारी को अथवा कर्मचारियों के एक वर्ग को नए कार्य सौंपे जाते हैं अथवा बढ़े हुए कार्य का परिमाण इतना हो कि उनके लिए एक बिल्कुल नया कार्यभार संस्थापित करना हो। नए क्षेत्रों में कार्य की चुनौतियों का मुकाबला करने के लिए कर्मचारियों को और अधिक कुशल बनाने के लिए पुनःप्रशिक्षण बहुत आवश्यक है।

प्रबंधन प्रशिक्षण (Management Training)

प्रबंधन प्रशिक्षण सामान्यतः कार्मिक प्रबंधन के और विशेषकर प्रशिक्षण के क्षेत्र में अपेक्षाकृत

नया और रोचक विकास है। हालाँकि, इसमें सामान्यतः पर्यवेक्षक स्तर से ऊपर के सभी प्रशिक्षणों को शामिल किया जा सकता है किंतु इस प्रशिक्षण का विशिष्ट प्ररूप–वर्गीकरण 'कार्यपालक विकास कार्यक्रमों' (Executive Development Programmes) और 'प्रबंधन विकास कार्यक्रमों' (Management Development Programmes) में पाया जाता है। ये कार्यक्रम अखिल भारतीय/केंद्रीय सेवा के ग्रुप "ए" के सभी अधिकारियों के लिए होते हैं। मध्य स्तर के अधिकारियों की सामाजिक–आर्थिक परिवेश के बारे में जानकारी बढ़ाना, प्रबंधन प्रक्रिया की आधुनिक अवधारणा और व्यवहारों की जानकारी प्रदान करना, कुछ आधुनिक प्रबंधन तकनीकों और साधनों की जानकारी देना और प्रशासन में मानव तत्व की मूल्यवृद्धि करना इन कार्यक्रमों का लक्ष्य होता है। 'कार्यपालक विकास कार्यक्रम' 6 सप्ताह की अवधि का होता है तथा यह ग्रुप "ए" के उन अधिकारियों के लिए होता है जिनकी सेवा अवधि 6–10 वर्ष की होती है, जबकि 'प्रबंधन विकास कार्यक्रम' 4 सप्ताह की अवधि का और 11–15 वर्ष की सेवा अवधि वाले ग्रुप "ए" के सभी अखिल भारतीय और केंद्रीय सेवाओं के अधिकारियों के लिए होता है।

वरिष्ठ स्तर की अफसरशाही में एक यह मान्यता बहुत प्रचलित है कि प्रबंधन के उच्चतम स्तर पर किसी भी प्रकार के प्रशिक्षण की आवश्यकता नहीं और उस स्तर पर उनके लिए सीखने की बहुत कम गुंजाइश होती है। ऐसी मान्यताएँ न केवल अनुचित हैं बल्कि जनहित के लिए यह हानिकारक भी हैं। यह सच है कि उनके कार्य में मूल रूप से किसी विशेष विशेषज्ञता का अभ्यास नहीं करना पड़ता, क्योंकि इसमें मुख्यतया नीति निर्माण करना होता है और परामर्श प्रदान किया जाता है किंतु उनके दृष्टिकोण और तरीके को समाकलनात्मक और विश्वव्यापी बनाने के लिए उन्हें भी नीति से संबंधित समस्याओं के विशिष्ट अध्ययन अथवा प्रशासनिक गतिविधि के कुछ क्षेत्रों में समग्र नीति निर्माण प्रक्रिया का विस्तृत अध्ययन करने की आवश्यकता होती है। इसके अतिरिक्त, यह प्रशिक्षण समस्याओं का समाधान करने, नेतृत्व प्रतिरूपों, अभिवृत्तिमूलक परिवर्तनों और अभिप्रेरक तकनीकों आदि की विभिन्न पद्धतियों के बारे में प्रशिक्षण प्रदान करने के लिए होता है।

दूसरे प्रशासनिक सुधार आयोग ने प्रशिक्षण को मानव संसाधन विकास का महत्वपूर्ण घटक माना। आयोग का यह मानना था कि सिविल सेवकों के लिए प्रशिक्षण की वर्तमान प्रणाली सामाजिक–आर्थिक परिदृश्य में परिवर्तनों और उभरती हुई नई चुनौतियों पर पर्याप्त रूप से विचार नहीं करती। इसके अलावा, आधार स्तर पर काम करने वाले लोगों की प्रशिक्षण संबंधी जरूरतों पर भी अपर्याप्त जोर दिया गया है। इसलिए, आयोग का यह मानना था कि सिविल सेवा प्रशिक्षुओं को नए प्रबंधन कौशल के साथ–साथ "टीम कार्य, सार्वजनिक निजी सहभागिता, नेटवर्क प्रबंधन और भ्रष्टाचार से निपटने से संबंधित मुद्दों जैसी अवधारणाओं से भी परिचित कराया जाए। आयोग के अनुसार, सभी सिविल सेवकों के लिए विज्ञान ज्ञान के जरिए कैरियर–मध्य प्रशिक्षण के साथ–साथ आगमनात्मक स्तर पर और प्रत्येक पदोन्नति से पहले अनिवार्य प्रशिक्षण की तथा प्रषिक्षण नीति के निरीक्षण के लिए निगरानी तंत्र की आवश्यकता है।

बोध प्रश्न 1

टिप्पणी: i) अपने उत्तरों के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ii) इकाई के अंत में दिए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

1) आधार प्रशिक्षण के महत्व की चर्चा कीजिए।

.....

.....

.....

.....

2) सेवाकालीन प्रशिक्षण के उद्देश्यों का उल्लेख कीजिए।

.....

.....

.....

.....

6.4 केंद्रीय प्रशिक्षण संस्थान

भारत में कुछ प्रशिक्षण संस्थानों द्वारा लोक सेवाओं के लिए प्रशिक्षण देने का सुस्थापित कार्य दीर्घकाल से हो रहा है। स्वतंत्रता से पूर्व ईस्ट इंडिया कम्पनी के जमाने में भी इसका चलन था। हालाँकि कोलकाता (कलकत्ता) स्थित फोर्ट विलियम कालेज (1800–1806) और ईस्ट इंडिया कालेज, (जिसे हैलीबरी कालेज (1809–1857) के नाम से जाना जाता था), जैसे संस्थान थे, किंतु यह केवल स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद ही हुआ कि सरकार के लिए यह प्रशिक्षण सरोकार का केंद्र–बिंदु बन गया। सिविल सेवकों की गुणवत्ता में सुधार लाने के लिए प्रशिक्षण की आवश्यकता महसूस की गई और इसलिए सरकार की कार्मिक नीतियों का यह अभिन्न अंग बन गया। लोक प्रशासन संबंधी गोरवाला रिपोर्ट (1951) से लेकर प्रथम प्रशासनिक सुधार आयोग (1966–72) सहित प्रायः सभी रिपोर्टों और इस प्रशासनिक सुधार आयोग के बाद तैयार की गई अधिकतर प्रशासनिक सुधार संबंधी सभी रिपोर्टों में लोक सेवाओं के एक सुव्यवस्थित और सुसंगत प्रशिक्षण एवं कैरियर विकास पर बल दिया गया है।

प्रथम प्रशासनिक सुधार आयोग का यह मत था कि प्रशिक्षण मानव संसाधन में एक निवेश है। यह मानव की क्षमता में सुधार करने और कार्मिकों की दक्षता में वृद्धि करने का एक महत्वपूर्ण साधन है। आयोग ने यह महसूस किया कि सेवा में आने के तुरंत बाद प्रशिक्षण आवश्यक है। आयोग का यह भी विचार था कि कुछ वर्षों तक कार्य का अनुभव कर लेने के बाद व्यक्ति को अपने क्षेत्र विशेष की विशिष्ट आवश्यकताओं के अनुरूप प्रशिक्षण अवश्य प्राप्त करना चाहिए। आयोग ने मध्य–कैरियर प्रबंधन प्रशिक्षण पर पर्याप्त जोर दिया और मध्य तथा वरिष्ठ स्तर के प्रबंध के लिए प्रशिक्षण की संस्तुति भी की।

इन प्रयत्नों के परिणामस्वरूप लोक सेवाओं के कार्मिकों की सामान्य और विशिष्ट आवश्यकताओं की पूर्ति करने के विचार से प्रशासनिक और प्रबंधन तकनीकों का प्रशिक्षण प्रदान करने के लिए केंद्र और राज्य स्तर पर अनेक प्रशिक्षण संस्थान स्थापित किए गए।

लाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय प्रशासन अकादमी, एक प्रमुख केंद्रीय प्रशिक्षण संस्थान है। यह संस्थान तीनों अखिल भारतीय सेवाओं I.A.S., I.P.S. व I.F.S. तथा अन्य ग्रुप "ए" सेवाओं के विभिन्न गैर–तकनीकी परिवीक्षाधीन अधिकारियों को सेवा में भर्ती के समय दिए जाने वाले

आधार प्रशिक्षण का आयोजन करने के अलावा भारतीय प्रशासनिक सेवा के कार्मिकों को सेवा में भर्ती होने के समय तथा इसके बाद उनके कैरियर के मध्यकाल में पुनश्चर्या पाठ्यक्रमों के माध्यम से प्रशिक्षित करता है। चूँकि अकादमी कार्मिकों की सभी श्रेणियों की प्रशिक्षण की आवश्यकताओं को पूरा नहीं कर पाती इसलिए अब अनेक प्रशिक्षण कार्यक्रम ऐसे विभिन्न संस्थानों को सौंप दिए गए हैं जहाँ न केवल भारतीय प्रशासनिक सेवा के अधिकारी बल्कि अन्य सेवाओं के अधिकारियों को भी भेजा जाता है। इन संस्थानों को केंद्रीय प्रशिक्षण संस्थान और राष्ट्रीय प्रशिक्षण संस्थान कहा जाता है। अखिल भारतीय और केंद्रीय सेवाओं में प्रशिक्षण की आवश्यकताओं की पूर्ति करने के लिए सरकार द्वारा स्थापित किए गए निम्नलिखित संस्थान शामिल हैं:

i) सरदार वल्लभभाई पटेल राष्ट्रीय पुलिस अकादमी, हैदराबाद

ii) वन अनुसंधान संस्थान, देहरादून

iii) राष्ट्रीय प्रत्यक्ष कर अकादमी, नागपुर

iv) राष्ट्रीय भारतीय रेल अकादमी, वडोदरा

v) भारतीय पोस्टल स्टाफ कालेज, गाजियाबाद

vi) राष्ट्रीय लेखा तथा लेखा–परीक्षा अकादमी, शिमला

vii) राष्ट्रीय सीमा शुल्क, अप्रत्यक्ष कर और नार्कोटिक्स अकादमी, फरीदाबाद

viii) विदेश सेवा संस्थान, नई दिल्ली।

इन संस्थानों के अलावा बैंकिंग संस्थाओं और सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों के भी अपने–अपने प्रशिक्षण केंद्र हैं। उदाहरण के लिए, ग्रामीण विकास के क्षेत्र में भी राष्ट्रीय ग्रामीण विकास और पंचायती राज संस्थान, हैदराबाद और ग्रामीण प्रबंधन संस्थान, आनंद जैसे प्रशिक्षण संस्थानों की स्थापना की गई है। ये संस्थान ग्रामीण विकास के प्रबंधन के प्रशिक्षण में अग्रणी का कार्य कर रहे हैं। अनेक राज्य सरकारों ने भी अपने–अपने राज्य में प्रशिक्षण संस्थान स्थापित किए हैं जो राज्य सिविल सेवाओं और सरकारी विभागों के अन्य कर्मचारियों को भर्ती होने पर दिए जाने वाले और सेवाकालीन प्रशिक्षण प्रदान करते हैं। राज्य प्रशिक्षण संस्थानों के बारे में हम इस इकाई के भाग 11.5 में चर्चा करेंगे।

ये प्रशिक्षण संस्थान अपने तकनीकी और व्यावसायिक कार्यक्रम आयोजित करने के अलावा प्रशिक्षणार्थियों को उनके वरिष्ठता समूहन के आधार पर प्रबंधन विकास कार्यक्रम (Management Development Programmes) कार्यपालक विकास कार्यक्रम (Executive Development Programmes) और सरकारी कार्यक्रमों का प्रबंधन (Management in Government Programmes - MIGPs) जैसे अल्पकालीन और कैरियर के मध्यकाल में दिए जाने वाले प्रशिक्षण कार्यक्रम भी आयोजित करते हैं। प्रशिक्षण कार्यक्रमों की विषयवस्तु में कार्मिक प्रबंधन, मानव संसाधन विकास, व्यवहारपरक विज्ञान, वित्त प्रशासन, ग्रामीण विकास, नगरपालिका का प्रशासन, संगठन और पद्धतियाँ, औद्योगिक संबंध आदि शामिल हैं। ये प्रशिक्षण संस्थान इन कार्यक्रमों का प्रबंधन अंशतः अपने संकाय से और अंशतः अतिथि संकाय से करते हैं जो बाहर से आमंत्रित किए जाते हैं और जो अपने–अपने विशिष्ट कार्य क्षेत्र में विशेषज्ञता और अनुभव प्राप्त होते हैं।

6.5 राज्य प्रशिक्षण संस्थान

मध्यवर्ती स्तर पर कार्य करने वाली राज्य सिविल सेवाएँ भारत की सिविल सेवाओं के लिए एक महत्वपूर्ण घटक का निर्माण करती हैं। हाल ही के वर्षों में, राज्य सरकारों के स्वरूप और कार्यों में कानून और व्यवस्था बनाए रखने, नागरिक सेवाएँ प्रदान करने, राजस्व संग्रहण और विकास कार्यकलाप में महत्वपूर्ण बदलाव आया है। इसलिए इन सेवाओं में भर्ती होने वाले अधिकारियों और अन्य कर्मचारियों की संख्या में पर्याप्त वृद्धि हुई है। सरकार के नए कार्यों के निष्पादन के लिए विशेषीकरण, आधुनिक प्रबंधन कौशल और तकनीकों के स्तर में वृद्धि करने तथा कार्मिकों में समझ–बूझ और वचनबद्धता होना आवष्यक है।

अधिकतर राज्यों में प्रशिक्षण का कार्य कुल मिलाकार काफी समय से उपेक्षित ही रहा है। विभिन्न प्रशासनिक सुधार समितियों ने राज्यों के विभिन्न स्तरों के सिविल कर्मचारियों को संस्थागत प्रशिक्षण और कार्य पर प्रशिक्षण प्रदान करने पर बल दिया है। इन समितियों में महाराष्ट्र प्रशासनिक पुनर्गठन समिति (1962–68), आंध्र प्रदेश प्रशासनिक सुधार समिति (1964–65) और मैसूर वेतन आयोग (1966–68) आदि शामिल हैं। प्रथम प्रशासनिक सुधार आयोग और इनके राज्य स्तर के प्रशासनिक अध्ययन दल ने सिविल सेवकों को औपचारिक और संस्थागत प्रशिक्षण देने की आवश्यकता को स्पष्ट रूप से मान्यता प्रदान की है। दोनों ही ने यह संस्तुति की कि प्रत्येक राज्य का अपना एक प्रशिक्षण कॉलेज/संस्थान होना चाहिए। अध्ययन दलों ने यह भी महसूस किया कि "प्रशिक्षण एक सतत् प्रक्रिया है और यह न केवल नए चयनित प्रत्याशियों को ही दिया जाना चाहिए बल्कि उन्हें भी देना चाहिए जो पहले से ही सेवारत हैं। कुछ राज्यों में अधिकारी प्रशिक्षण विद्यालय की संस्थाएँ प्रचलित नहीं हैं। प्रत्येक राज्य का अपना एक अधिकारी प्रशिक्षण विद्यालय होना वांछनीय है।" इन सबसे राज्यों में प्रशिक्षण के बारे में जागरूकता में वृद्धि हुई और उनके समक्ष अपने–अपने राज्यों में कर्मचारियों को भर्ती के बाद तथा सेवाकालीन प्रशिक्षण प्रदान करने के लिए राज्य प्रशिक्षण संस्थानों की स्थापना करने के लिए मार्ग प्रशस्त हुआ।

कुछ मुख्य राज्य प्रशिक्षण संस्थान (State Training Institutions) इस प्रकार हैं:

i) डॉ. मर्रि चेन्ना रेड्डी मानव संसाधन विकास संस्थान, हैदराबाद

ii) सरदार पटेल लोक प्रशासन संस्थान, अहमदाबाद

iii) हरियाणा लोक प्रशासन संस्थान, गुरूग्राम

iv) हिमाचल प्रदेश लोक प्रशासन संस्थान, शिमला

v) सरकारी प्रबंधन संस्थान, तिरुवनंतपुरम

vi) पंजाब राज्य लोक प्रशासन संस्थान, चंडीगढ़

vii) एच.सी.एम. राजस्थान राज्य लोक प्रशासन संस्थान, जयपुर

viii) प्रशासनिक प्रशिक्षण संस्थान, कोलकाता

ix) उत्तराखंड प्रशासन अकादमी, नैनीताल

x) उत्तर प्रदेश प्रशासन और प्रबंधन अकादमी, लखनऊ

xi) प्रशासनिक प्रशिक्षण संस्थान, मैसूर

xii) यशवंतराव चव्हाण विकास प्रशासन अकादमी, पुणे

xiii) आर सी वी पी, नोरोन्हा प्रशासन अकादमी, भोपाल

6.6 राज्य प्रशिक्षण संस्थानों के कार्य

राज्य प्रशिक्षण संस्थान द्वारा आम तौर पर निम्नलिखित विशिष्ट कार्य निश्पादित किए जाते हैं:

1) राज्य को आबंटित अखिल भारतीय सेवाओं के उन अधिकारियों को इस विचार से प्रशिक्षण दिया जाता है कि उन्हें राज्य की सामाजिक–आर्थिक, सांस्कृतिक और ऐतिहासिक पृष्ठभूमि से तथा उनके कार्यों से संबद्ध राज्य सरकार के प्रशासनिक तंत्र से परिचित करा दिया जाए एवं साथ ही उन्हें उस राज्य की विशिष्ट समस्याओं के प्रति संवेदनशील बनाया जा सके।

2) अखिल भारतीय सेवाओं और राज्य सेवाओं के उन अधिकारियों के लिए पाठ्यक्रम आयोजित करते हैं जिन्हें भारत सरकार के विभिन्न संबंधित मंत्रालयों द्वारा प्रायोजित किया जाता है।

3) राज्य सिविल सेवाओं के अधिकारियों के लिए इस विचार को ध्यान में रखकर आधार पाठ्यक्रमों का आयोजन करना जिससे उनमें सौहार्दपूर्ण भाव पैदा किया जा सके और उन्हें राज्य के प्रशासनिक तंत्र के सामान्य मूलभूत मूल्यों की ओर उन्मुख किया जा सके।

4) उन अधिकारियों के लिए प्रारंभिक (प्रवेश) पाठ्यक्रमों का आयोजन करना जिनकी भर्ती राज्य प्रशासनिक सेवा में सीधे ही हुई है और उन अन्य सेवाओं के लिए भी यह प्रशिक्षण आयोजित करना जिनके संबंधित विभागों में यह प्रशिक्षण सुविधा नहीं होती। सामान्य प्रबंधन, वित्त प्रबंधन, कार्यालय प्रबंधन, कंप्यूटर अनुप्रयोग आदि जैसे कुछ विशिष्ट क्षेत्रों में अक्सर उन संबंधित विभागों में प्रशिक्षण दिया जाता है जहाँ उपयुक्त क्षेत्र में प्रशिक्षण देने के लिए पर्याप्त आधारभूत ढाँचा नहीं होता।

5) राज्य सरकार के अधिकारियों के लिए उनकी रुचि के विशिष्ट क्षेत्रों में पुनश्चर्या और सेवाकालीन प्रशिक्षण पाठ्यक्रम आयोजित करना।

6) राज्य के विभागों और अन्य प्रशिक्षण संस्थानों के प्रशिक्षकों को प्रशिक्षण देने के कार्यक्रम आयोजित करता है।

7) यह सुनिश्चित करना कि सभी विभागों के सभी अधिकारियों को सभी चरणों में और समुचित अंतराल में विभागीय और अन्य प्रशिक्षण संस्थानों में पर्याप्त प्रशिक्षण दिया जाता है और राज्य स्तर पर इन सभी कार्यकलापों का समन्वय करना।

भारत में लगभग 30 राज्य प्रशिक्षण संस्थान हैं और उनकी संरचना और कार्यकलापों में कुछ मात्रा तक एकरूपता लाना आवश्यक है। यह कार्य राज्य प्रशिक्षण संस्थानों को राज्य प्रशासनिक सेवा के लिए व्यावसायिक प्रशिक्षण संस्थान के रूप में निर्धारित करके किया जा सकता है। इसके लिए राज्य प्रशासनिक सेवा के लिए भी प्रशिक्षण देने का वही तरीका अपनाना होगा जो लाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय प्रशासन अकादमी में (भारतीय प्रशासनिक सेवा के लिए), के लिए अपनाया जाता है। राज्य प्रशिक्षण संस्थानों को सिविल सेवाओं में

द्वितीय श्रेणी के सीधे भर्ती रंगरूटों के लिए सामान्य आधार पाठ्यक्रम (Common Foundational Course) आयोजित करने के लिए भी उत्तरदायी बनाना चाहिए जिसके पश्चात प्रवेश (Induction) प्रशिक्षण कार्यक्रम करना चाहिए।

राज्य प्रशिक्षण संस्थान राज्य स्तर का एक शीर्ष या नोडल संस्थान होता है। इसे राज्य में कार्मिकों को प्रशिक्षण देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभानी होती है। इस संस्थान का मुख्य कार्य राज्य की प्रमुख सेवाओं के लिए प्रारंभिक, पुनश्चर्या, और सेवाकालीन प्रशिक्षण कार्यक्रम ही आयोजित नहीं करना हैं बल्कि राज्य के सभी विभागों/संगठनों के सभी स्तरों के विभिन्न अधिकारियों की प्रशिक्षण संबंधी आवश्यकताओं का आकलन करना और आवश्यक प्रशिक्षण कार्यक्रमों की व्यवस्था करना भी इस संस्थान का मुख्य कार्य है। इसे राज्य के सभी सिविल सेवकों के प्रशिक्षण से संबंधी मास्टर प्लान भी तैयार करने होते हैं। यदि राज्य प्रशिक्षण संस्थान को अपनी नोडल भूमिका का निर्वाह प्रभावी तरीके से करना है तो उसे प्रशिक्षण स्तर को उन्नत करने के विचार से समय–समय पर प्रशिक्षण कार्यकलापों का मूल्यांकन करने का दायित्व लेना होगा।

यदि राज्य प्रशिक्षण संस्थान एक उत्कृष्ट प्रशिक्षण केंद्र के रूप में विकसित होना चाहता है तो उसे देश के उपयुक्त राश्ट्रीय स्तर के संस्थानों से संपर्क बनाना होगा और अन्य राज्यों में कार्यरत उसी स्तर के राज्य प्रशिक्षण संस्थानों से समस्तर संबंध बनाना होगा ताकि वे प्रशिक्षण के क्षेत्र में एक–दूसरे को सुदृढ़ कर सकें और सहयोग प्रदान कर सकें। जिला स्तर पर भर्ती किए गए स्टाफ के लिए क्षेत्रीय/प्रभागीय/जिला स्तर पर विकेंद्रीकृत प्रशिक्षण केंद्रों की स्थापना करके प्रशिक्षण कार्यकलापों को विकेंद्रीकृत करना चाहिए। उदाहरण के तौर पर, शिमला स्थित हिमाचल प्रदेश लोक प्रशासन संस्थान कई अन्य संवर्ग सेवाओं और कतिपय विशेषज्ञ क्षेत्रों के लिए प्रशिक्षण संस्थान के रूप में मनोनीत किए गए है। इनमें प्रमुख हैं:

- राज्य प्रशासनिक प्रशिक्षण संस्थान
- राज्य ग्राम विकास संस्थान
- प्राकृतिक आपदा प्रबंधन प्रशिक्षण केंद्र
- अधीनस्थ लेखा सेवा (Subordinate Account Services) के लिए प्रशिक्षण

संस्थान ने धर्मशाला और मंडी में दो क्षेत्रीय केंद्र स्थापित किए हैं जो शिमला के अलावा दो प्रभागीय मुख्यालय हैं।

केरल सरकार के तत्वावधान में सरकारी, निजी और सार्वजनिक क्षेत्र के विभिन्न श्रेणियों के कर्मचारियों में प्रबंधकीय कौशल, संगठनात्मक क्षमताएँ, नेतृत्व गुण और निर्णय करने की दक्षताएँ विकसित करने के उद्देश्य से 1981 में स्वायत्त निकाय के रूप में सरकारी प्रबंधन संस्थान (Institute of Management in Government) तिरुवंतपुरम (केरल), स्थापित किया गया था। केरल सरकार की राज्य प्रशिक्षण नीति 2004 का कार्यान्वयन करने का दायित्व इस संस्थान को सौंपा गया है। राज्य में सक्षम व्यावसायिक और प्रतिबद्ध सिविल सेवा का निर्माण करना नीति का उद्देश्य है। इस संस्थान के राज्य में दो केंद्र हैं जिनमें से एक कोच्चि (Kochi) में तथा दूसरा कोझीकोड (Kozhikode) में है।

संस्थान का एक अन्य महत्वपूर्ण पहलू संस्थान के प्रशिक्षकों को प्रशिक्षण देना है क्योंकि प्रशिक्षकों की गुणवत्ता प्रशिक्षण कार्यक्रमों के प्रभाव को निर्धारित करती है। प्रशिक्षकों को ऐसे

क्षेत्रों में अनुसंधान कार्य करने की जानकारी देने की आवश्यकता है जहाँ वे प्रशिक्षणार्थियों के सम्मुख आने वाली जीवन की वास्तविक कठिनाइयों का सामना करते हैं और प्रशिक्षण कार्यक्रमों के दौरान चर्चा करने के लिए केस–अध्ययन तैयार करने के लिए प्रोत्साहित हों। साथ ही, उन्हें प्रशिक्षण प्रौद्योगिकियों में होने वाले विकासों की जानकारी लगातार उपलब्ध कराई जानी चाहिए। व्याख्यान (लेक्चर) देने की प्रणाली का अभिशद प्रणाली (Syndicates), भूमिका निर्वाह (Role play), केस–अध्ययन प्रणाली आदि जैसी अपेक्षाकृत अधिक विवेकपूर्ण प्रणालियों से प्रतिस्थापित करना एक परम आवश्यकता बन गई है। इसी प्रकार यदि राज्य प्रशिक्षण संस्थान अपनी प्रमुख भूमिका प्रभावी तरीके से निर्वाह करना चाहता हो तो उसे प्रशिक्षण स्तर के उन्नयन को ध्यान में रखकर समय–समय पर प्रशिक्षण कार्यकलापों का मूल्यांकन करने का दायित्व लेना होगा।

प्रशिक्षण के प्रति सामान्य दृष्टिकोण और राज्य में प्रशिक्षण के संपूर्ण संदर्भ में राज्य प्रशिक्षण संस्थान द्वारा निभाई जाने वाली निर्णायक भूमिका राज्य विशेष की विशेष परिस्थितियों और स्थितियों को ध्यान में रखकर किए जाने वाले आवश्यक संशोधनों के साथ विशिष्ट होनी चाहिए।

द्वितीय प्रशासनिक सुधार आयोग ने राष्ट्रीय और राज्य स्तरों पर प्रशिक्षण संस्थानों में दोबारा जान फूँकने की आवश्यकता पर जोर दिया है। संघ और राज्य स्तरों पर प्रशिक्षण संस्थानों की जरूरतों को पूरा करने के लिए सुदृढ़ नेटवर्क बनाया जाना चाहिए ताकि सिविल सेवकों की प्रशिक्षण संबंधी जरूरतों को पूरा किया जा सके। क्षमता निर्माण और उन्नयन के लिए कुछ प्रशिक्षण संस्थानों की पहचान भी की जानी चाहिए। आयोग ने यह सिफारिश भी की कि सुशासन की व्यापक विषयवस्तु पर सर्वोत्तम व्यवहार और आचरण के प्रचार–प्रसार के लिए सुशासन का एक राष्ट्रीय संस्थान स्थापित किया जाना चाहिए।

बोध प्रश्न 2

टिप्पणी: i) अपने उत्तरों के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ii) इकाई के अंत में दिए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

1) राज्य प्रशिक्षण संस्थानों के कार्यों का वर्णन कीजिए।

.....

.....

.....

.....

2) राज्य में प्रशिक्षण के लिए एक नोडल एजेंसी के रूप में राज्य प्रशिक्षण संस्थान की भूमिका को बढ़ाने के लिए क्या उपाय किए जा सकते हैं?

.....

.....

.....

.....

6.7 निष्कर्ष

कार्य–निष्पादन के बुनियादी निवेश के रूप में प्रशिक्षण की अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका है। यह मनोवृत्ति में परिवर्तन लाने और उत्पादकता में वृद्धि करने में सहायक का काम करता है। विकास योजनाओं के कार्यान्वयन में यह एक महत्वपूर्ण साधन है। इस इकाई में अपने देश में केंद्रीय और राज्य प्रशिक्षण संस्थानों के विकास की चर्चा की गई है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् प्रशिक्षण सरकार के लिए सरोकार का केंद्र–बिंदु और सरकार की कार्मिक नीतियों का एक हिस्सा बन गया है। इस इकाई में हमने कार्मिकों को प्रदान किए जाने वाले विभिन्न प्रकार के प्रशिक्षणों के बारे में चर्चा की है। इनमें आधार प्रषिक्षण, सेवा प्रवेश पर प्रशिक्षण और सेवाकालीन प्रशिक्षण शामिल हैं। इस इकाई में राज्य में प्रशिक्षण के लिए नोडल एजेंसी के रूप में राज्य प्रशिक्षण संस्थानों के कार्यों पर भी प्रकाश डाला गया है।

6.8 शब्दावली

पक्वन अवधि (Gestation Period) : प्रशिक्षण के प्रभाव का निर्णय काफी समय पश्चात् किया जा सकता है क्योंकि इसमें यंत्रों और तकनीकों का प्रभाव मात्रात्मक है अथवा व्यावहारिक जैसे कई प्रकार के प्रभावों को मापा जाता है। ये सभी समय बीतने के साथ देखा जाता है।

अनुभवसिद्ध (Rule of Thumb) : यह एक ऐसा नियम है जिसका सुझाव वैज्ञानिक ज्ञान की बजाय व्यावहारिक ज्ञान के द्वारा मोटे अनुमान के आधार पर दिया जाता है।

6.9 संदर्भ लेख

Arora,Ramesh K and Rajni Goyal,(Eds), 2013 *Indian Public Administration Institutions and Issues*. (Third Edition), New Age International Publishers, New Delhi.

Chaturvedi, T.N.(Ed) 1989,T*raining in Public administration: The Changing Perspectives, IIPA*, New Delhi.

Maheshwari, S.R.1989, *Indian Administration(4th Edition)*,Orient Longman,New Delhi.

Mathur, Hari Mohan.1981,'*Training of Civil Servants in India*,' Training Division,Department of Personnel and Administrative Reforms,Government of India, New Delhi.

Mathur,Hari Mohan (Ed.), 1982, *Issues in In-Service Training*, IIPA, New Delhi.

Saxena, A.P. (Ed),1985, *Training in Government- Objectives and Opportunities*, IIPA, New Delhi.

6.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) आपके उत्तर में निम्नलिखित बातें शामिल होनी चाहिए:

- बुनियादी प्रशिक्षण इसलिए महत्वपूर्ण है क्योंकि यह रंगरूटों को देश की आधारभूत सामाजिक–आर्थिक वास्तविकताओं, राजनीतिक परिवेश, सरकारी विचारधारा के साथ–साथ सरकार के विभिन्न अंगों, अभिकरणों एवं नागरिकों और प्रशासन आदि के बीच अंतर्संबंध की प्रणालियों की जानकारी प्रदान करता है।
- यह "सौहार्द" और सिविल सेवा मित्रमंडली उत्पन्न करने में सहायता करता है।

2) आपके उत्तर में निम्नलिखित बातें शामिल होनी चाहिए:

- सेवाकालीन प्रशिक्षण कर्मचारियों के नवीन ज्ञान, नवीन कौशल, बेहतर अभिवृत्तिगत और व्यावहारिक प्रतिरूपों को प्रेरित करने में सहायता करता है।
- सुसंगत चिंतन और समस्या–समाधान की योग्यता का विकास करता है जिससे उनके कार्य–निष्पादन स्तर में वृद्धि होती है।

बोध प्रश्न 2

1) भाग 6.6 देखिए।

2) आपके उत्तर में निम्नलिखित बातें शामिल होनी चाहिए:

- राष्ट्रीय स्तर के और राज्य स्तर के अन्य सुसंगत प्रशिक्षण संस्थानों के साथ समुचित सहसंबंध स्थापित करना।
- क्षेत्रीय और जिला प्रशिक्षण केंद्रों की स्थापना करके राज्य प्रशिक्षण संस्थानों के प्रशिक्षण कार्यकलापों को विकेंद्रीकृत करना।
- केस अध्ययन प्रणाली, अभिषद, भूमिका निर्वाह आदि जैसी प्रशिक्षण की नई तकनीकों को शामिल करना।

इकाई 7 केन्द्र और राज्य प्रशासनिक अधिकरण

इकाई की रूपरेखा

7.0 उद्देश्य

7.1 प्रस्तावना

7.2 प्रशासनिक अधिकरणों का विकास

7.3 प्रशासनिक अधिकरणों की संरचना

7.4 प्रशासनिक अधिकरणों का गठन

7.5 प्रशासनिक अधिकरण : अधिकार–क्षेत्र, शक्तियाँ और प्राधिकार

7.6 प्रशासनिक अधिकरणों में आवेदन की प्रक्रिया

7.7 प्रशासनिक अधिकरणों के लाभ और उनकी सीमाएँ

7.8 निष्कर्ष

7.9 शब्दावली

7.10 संदर्भ लेख

7.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

7.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप:

- प्रशासनिक अधिकरणों के विकास की चर्चा कर सकेंगे;
- प्रशासनिक अधिकरणों की संरचना और गठन की व्याख्या कर सकेंगे;
- प्रशासनिक अधिकरणों के अधिकार–क्षेत्र, शक्तियों और प्राधिकार का वर्णन कर सकेंगे;
- प्रशासनिक अधिकरणों में आवेदन करने की प्रक्रिया का उल्लेख कर सकेंगे; और
- प्रशासनिक अधिकरणों के लाभ और उनकी सीमाओं पर प्रकाश डाल सकेंगे।

7.1 प्रस्तावना

राज्य के कार्य विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका के माध्यम से किए जाते हैं। विधायिका को कानून बनाने की शक्ति है, जबकि कार्यपालिका को कानूनों के क्रियान्वयन का कार्य सौंपा गया है। न्यायपालिका नागरिकों के अधिकारों की रक्षा करने के लिए विभिन्न विवादों का परीक्षण करती है। भारत के संविधान के अधीन नागरिकों को प्रत्याभूत (गारंटित) मूलभूत अधिकारों के लिए अधिनिर्णयन या विवाद निपटान मशीनरी के माध्यम से सांविधानिक उपायों का अधिकार प्रदान करता है। इसमें न्यायालय और अधिकरण सहित अर्ध–न्यायिक निकाय शामिल हैं। भारत में, व्यापार, उद्योग, कराधान, सेवा संबंधी मामलों सहित विभिन्न कार्यों की जाँच करने के लिए प्रशासनिक अधिकरण स्थापित किए गए हैं।

सरकारी संगठनों में नियुक्त कार्मिकों की सरकार के विरूद्ध अपनी सेवा संबंधी मामलों के बारे में कुछ शिकायतें और परिवाद हो सकते हैं। उनपर षीघ्रता से तथा निष्पक्षता के साथ

*यह इकाई बी.पी.ए.ई.–104, खंड 3 से ली गई है।

विचार करना आवश्यक है। इसलिए हमारे देश में प्रशासनिक अधिकरणों के रूप में उपयुक्त संस्थागत संरचना स्थापित की गई जिसे लोक सेवा कार्मिकों के सेवा संबंधी विवादों के अधिनिर्णयन का उत्तरदायित्व सौंपा गया है।

इस इकाई में, हम केंद्रीय प्रशासनिक अधिकरण, राज्य एवं संयुक्त प्रशासनिक अधिकरणों, उनके अधिकार–क्षेत्र, शक्तियों और प्राधिकार के विशेष संदर्भ के साथ प्रशासनिक अधिकरणों के विकास के बारे में पढ़ेंगे। प्रशासनिक अधिकरण के गठन और उसके कार्य प्रणाली की भी चर्चा की जाएगी। इस इकाई में प्रशासनिक अधिकरणों के लाभ और उनकी सीमाओं की भी चर्चा की जाएगी।

7.2 प्रशासनिक अधिकरणों का विकास

विकसित और विकासशील देशों में प्रशासनिक अधिकरणों का विकास बीसवीं शताब्दी की एक महत्वपूर्ण घटना रही है। भारत में भी केंद्र और राज्यों में, समय–समय पर कई अधिकरण स्थापित किए गए। इन अधिकरणों के अधिकार–क्षेत्र में व्यापार, उद्योग, बैंकिंग, कराधान जैसी गतिविधियों के क्षेत्र शामिल थे। सरकारी कर्मचारियों की भर्ती और अन्य सेवा दशाओं से संबंधित शिकायतों के मामले में शीघ्र और सस्ती राहत देने के लिए प्रशासनिक अधिकरणों के गठन का सवाल एक लंबे समय से भारत सरकार के विचाराधीन था। न्यायिक अदालतें अपनी भारी व्यस्तता, लंबे समय से लंबित तथा पिछले बकाया मामलों, खर्च और समय संबंधी कारणों से सरकारी कर्मचारियों को सरकार के साथ उनके विवादों में अत्यावश्यक समाधान नहीं दे सकती थी। सभी वर्ग, श्रेणी या समूह के कर्मचारियों में व्याप्त असंतोष उनके लंबे समय से लंबित मामले या मामलों में विलंब या ठीक से नहीं निपटाए/ध्यान दिए गए मामलों के कारण ही है। इसलिए, एक ऐसी संस्था की स्थापना करने की जरूरत महसूस की गई जो उन पीड़ित कर्मचारियों को तुरंत राहत देने में सहायता करें जिन्हें अपनी सेवा की शिकायतों के निपटारे में अन्याय और निष्पक्षता का अभाव प्रतीत होता है। इससे कर्मचारियों को बेहतर प्रेरणा मिलेगी और उनका आत्मबल ऊँचा होगा जिससे उनकी कार्य करने की क्षमता बढ़ेगी।

प्रथम प्रशासनिक सुधार आयोग (1966–70) ने लोक सेवा अधिकरणों (Civil Service Tribunals) की स्थापना की सिफारिश की ताकि ये अधिकरण उन मामलों में अंतिम अपील प्राधिकरण की हैसियत से काम करें जहाँ सरकारी आदेश से कर्मचारी को बर्खास्तगी, नौकरी से हटाने और उनकी पदावनति का गंभीर दंड मिला हो। 1969 में ही, जे.सी. शाह की अध्यक्षता वाली एक समिति ने यह सिफारिश की थी कि सेवा के मामलों में कर्मचारियों की बहुत सारी विचाराधीन एवं लंबित रिट याचिकाओं को देखते हुए, एक ऐसा स्वतंत्र अधिकरण स्थापित किया जाना चाहिए जो केवल सेवा या नौकरी के मामलों को ही निपटाए।

वर्ष 1980 में, कई रिट याचिकाओं को एक साथ निपटाते हुए, उच्चतम न्यायालय ने यह पाया कि सरकारी कर्मचारियों को अदालती लड़ाई में समय और शक्ति गंवाने के लिए प्रेरित या मजबूर नहीं किया जाना चाहिए। ऐसे लोक सेवा अधिकरणों की स्थापना की जानी चाहिए जिसका सेवा दशाओं से संबंधित विवादों को हल करने के मामलों में फैसला अंतिम होना चाहिए। सरकार ने यह भी सुझाया कि सरकारी कर्मचारी पहली बार में ही तथ्यों का पता लगाने वाले प्रशासनिक अभिकरणों में जा सकते हैं।

यह मामला बहस के लिए दूसरे मंचों पर भी आया और मतैक्य (आम राय) यह बना कि लोक सेवा अधिकरणों की स्थापना, लोकहित में, सरकारी कर्मचारियों की शिकायतों का अधिनिर्णय

करने के लिए वांछित और आवश्यक होगी। भारत के संविधान में (42वें संशोधन, अनुच्छेद 323–ए के द्वारा) संशोधन किया गया जिससे लोक सेवा अधिकरणों (Civil Service Tribunals) की स्थापना संभव हो सके। देश में विभिन्न उच्च न्यायालयों और अन्य न्यायालयों में भारी संख्या में लंबित मामलों को कम करने की दृष्टि से संसद ने प्रशासनिक अधिकरण अधिनियम (Administrative Tribunals Act) 1985 में बनाया जो जुलाई 1985 से लागू हुआ।

प्रशासनिक अधिकरण अधिनियम से संसद को यह अधिकार मिल गया कि वह सरकार के स्वामित्व या नियंत्रण वाले किसी निगम के या सरकार के नियंत्रण के अधीन या भारत के शासित क्षेत्र के अंदर किसी राज्य स्तर के या स्थानीय या दूसरे प्राधिकरण या संघ (केंद्र) के मामलों के संबंध में सरकारी नौकरी या पद पर नियुक्त किए गए व्यक्तियों की भर्ती और सेवा–शर्तों संबंधी विवादों और शिकायतों को प्रशासनिक अधिकरणों के द्वारा निपटाए या सुने जाने की व्यवस्था कर सके।

संविधान के अनुच्छेद 323–ए के प्रावधानों के अनुसरण में, लोकसभा में 29 जनवरी, 1985 को प्रशासनिक अधिकरण विधेयक लाया गया, जिसे 27 फरवरी 1988 को राष्ट्रपति की स्वीकृति मिली। उच्चतम न्यायालय के 18 मार्च 1997 को दिए गए निर्णय के अनुसार, प्रशासनिक अधिकरण के आदेशों के विरुद्ध संबद्ध उच्च न्यायालय की खंडपीठ के समक्ष अपील की जा सकती है।

व्यथित व्यक्ति व्यक्तिगत रूप से अधिकरण के सामने प्रकट हो सकता है। सरकारी अपने विभागीय अधिकारियों या कानूनी चिकित्सकों के माध्यम से अपना मामला पेश कर सकती है। अधिकरण का उद्देश्य मुकदमों को तेज और सस्ता न्याय प्रदान करना है।

प्रशासनिक अधिकरण अधिनियम 1985 के प्रावधान अर्ध सैन्य बलों (पैरा–मिलिटरी फोर्सेज), केंद्र की सशस्त्र सेनाओं, उच्चतम न्यायालय के अधिकारियों और कर्मचारियों, संसद के दोनों सदनों के सचिवालयों में नियुक्त व्यक्तियों और राज्य/संघ शासित क्षेत्रों के विधानमंडलों के सचिवालयों में नियुक्त व्यक्तियों पर लागू नहीं होता है।

7.3 प्रशासनिक अधिकरणों की संरचना

प्रशासनिक अधिकरण अधिनियम 1985 में एक केंद्रीय प्रशासनिक अधिकरण और प्रत्येक राज्य के लिए एक–एक राज्य प्रशासनिक अधिकरण और दो या दो से अधिक राज्यों के लिए एक संयुक्त प्रशासनिक अधिकरण स्थापित करने की व्यवस्था है। केंद्रीय प्रशासनिक अधिकरण की स्थापना 1 नवंबर, 1985 को हुई। इसकी मुख्य न्यायपीठ (बेंच) दिल्ली में, और उसकी अन्य न्यायपीठें इलाहाबाद, मुंबई, कोलकाता और चेन्नई में हैं। इस अधिनियम के तहत केंद्रीय प्रशासनिक अधिकरण को उन व्यक्तियों की भर्ती और सेवा संबंधी मामलों के विवादों और शिकायतों पर फैसला देने का क्षेत्राधिकार, शक्तियाँ और प्राधिकार मिल गया जो अखिल भारतीय सेवाओं और संघ की किसी अन्य लोक सेवा के सदस्य हैं या संघ में किसी सरकारी पद पर हैं या एक सिविलयन की हैसियत से प्रतिरक्षा से संबंधित या प्रतिरक्षा सेवाओं में किसी पद पर हैं।

इस अधिनियम में राज्य सरकारों के कर्मचारियों के सेवा संबंधी मामलों का निपटारा करने के लिए राज्य प्रशासनिक अधिकरणों (State Administrative Tribunals - SATs) की स्थापना की व्यवस्था है। दो या दो से अधिक राज्यों के लिए संयुक्त प्रषासनिक अधिकरण

की स्थापना की व्यवस्था है। उड़ीसा, हिमाचल प्रदेश, कर्नाटक, मध्य प्रदेश और तमिलनाडु की सरकारों के विशेष अनुरोध पर, संबंधित राज्य सरकार के कर्मचारियों के सेवा संबंधी मामलों को देखने के लिए प्रशासनिक अधिकरणों की स्थापना की गई है।

7.4 प्रशासनिक अधिकरणों का गठन

प्रत्येक अधिकरण में एक अध्यक्ष होगा और इतने उपाध्यक्ष और न्यायिक और प्रशासनिक सदस्य होंगे जितने संबंधित सरकार (या तो केंद्रीय सरकार या कोई विशिष्ट राज्य सरकार अकेले या संयुक्त रूप से) उचित समझेगी। न्यायपीठ में एक न्यायिक सदस्य और एक प्रशासनिक सदस्य होगा। नई दिल्ली स्थित न्यायपीठ को केंद्रीय प्रशासनिक अधिकरणों के लिए और उसके राज्य प्रशासनिक अधिकरणों के लिए प्रधान न्यायपीठ निर्दिष्ट किया गया था। जिन स्थानों में उनकी प्रधान न्यायपीठ और अन्य न्यायपीठें बैठेंगी उन स्थानों को अधिसूचना द्वारा राज्य सरकारों द्वारा विनिर्दिष्ट किया गया है।

नियुक्ति के लिए अर्हताएँ

अध्यक्ष के रूप में नियुक्ति के लिए, व्यक्ति को किसी उच्च न्यायालय का न्यायाधीश (वर्तमान या विगत में) होना चाहिए किंतु अधिनियम के प्रवर्तन से पूर्व यदि कोई व्यक्ति उपाध्यक्ष के पद पर नियुक्त कर लिया गया है तो अध्यक्ष पद पर नियुक्ति के लिए उसने उपाध्यक्ष के रूप में कम से कम दो वर्ष की अवधि तक काम किया होना चाहिए।

प्रशासनिक सदस्य के रूप में नियुक्ति के लिए व्यक्ति को केंद्र सरकार या केंद्र सरकार के अंतर्गत या राज्य सरकार के अंतर्गत अन्य सेवाओं से संबंधित सचिव के रूप में अनुभव होना चाहिए और सरकार के सचिव के समकक्ष वेतन प्राप्त किया हो अथवा अधिनियम में निर्धारित अवधि के लिए अपर सचिव के रूप में दो वर्ष तक कार्य किया हो। संशोधन अधिनियम 2006 में उल्लिखित शर्तों के अनुसार, अखिल भारतीय सेवाओं के व्यक्ति भी प्रशासनिक सदस्य नियुक्त किए जा सकते हैं।

केंद्र सरकार, विधिक मामले विभाग के सचिव के रूप में काम कर रहे या विधायी विभाग में ऐसे अन्य पद पर काम कर चुके व्यक्ति की न्यायिक सदस्य के रूप में नियुक्ति की जाएगी। केंद्रीय विधि आयोग के सदस्य सचिव को भी न्यायिक सदस्य के रूप में नियुक्त किया जा सकता है।

नियुक्तियाँ

केंद्रीय प्रशासनिक अधिकरण के अध्यक्ष, उपाध्यक्ष और प्रत्येक अन्य सदस्य की नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा और राज्य या संयुक्त प्रशासनिक अधिकरण/अधिकरणों के मामले से संबंधित राज्य/राज्यों के राज्यपाल/राज्यपालों की सलाह पर राष्ट्रपति द्वारा की जाएगी। परंतु अध्यक्ष, उपाध्यक्ष या न्यायिक सदस्य की नियुक्ति भारत के मुख्य न्यायाधीश की सलाह के बिना नहीं की जा सकेगी।

पदावधि

केंद्र सरकार द्वारा अनुमोदित सांविधानिक संशोधन विधेयक 2012 की व्यवस्था के अनुसार अध्यक्ष, उपाध्यक्ष या अन्य सदस्य पद ग्रहण करने की तारीख से पाँच साल की अवधि के लिए या

क) अध्यक्ष/उपाध्यक्ष के मामले में 68 वर्ष की आयु तक, और

ख) सदस्यों के मामले में 65 वर्ष की आयु तक (जो भी पहले हो) काम करेंगे।

त्यागपत्र या पद से हटाया जाना

प्रशासनिक अधिकरण का अध्यक्ष, उपाध्यक्ष या अन्य कोई भी सदस्य राष्ट्रपति को लिखकर अपने पद से त्यागपत्र दे सकता है, लेकिन अपने त्यागपत्र देने की तारीख से तीन माह की अवधि पूरी होने तक या अपना कार्यकाल पूरा होने तक या अपने उत्तराधिकारी के काम पर आने की तारीख तक (जो भी पहले हो) अपने पद पर काम करता रहेगा।

उन्हें उनके पद से तभी हटाया जा सकता है जब उच्चतम न्यायालय के किसी न्यायाधीश द्वारा जाँच–पड़ताल के बाद उनके दुर्व्यवहार या अक्षमता की पुष्टि हो जाने के आधार पर राष्ट्रपति उन्हें हटाने का आदेश करे; और इससे पहले उन्हें इन आरोपों के जबाव में अपनी बात कहने का उचित अवसर दिया गया हो।

सांविधानिक संशोधन विधेयक 2006 के अनुसार, यदि केंद्र सरकार की यह राय हो कि केंद्रीय प्रशासनिक अधिकरण अथवा उसकी किसी भी शाखा का अस्तित्व बने रहना जरूरी नहीं है तो उनमें से किसी को भी अधिसूचना के जरिए समाप्त किया जा सकता है।

आगे नियुक्ति के लिए पात्रता

केंद्रीय प्रशासनिक अधिकरण का अध्यक्ष केंद्र या राज्य सरकार के अधीन आगे नियुक्ति के लिए पात्र नही होगा, लेकिन केंद्रीय प्रशासनिक अधिकरण का उपाध्यक्ष उसी प्रशासनिक अधिकरण या अन्य किसी राज्य अधिकरण या किसी अन्य राज्य अथवा संयुक्त प्रशासनिक अधिकरण (अधिकरणों) का उपाध्यक्ष अध्यक्ष पद के लिए पात्र होगा।

तथापि, किसी राज्य या संयुक्त प्रशासनिक अधिकरण/अधिकरणों का अध्यक्ष केंद्रीय प्रशासनिक अधिकरण के अध्यक्ष या उपाध्यक्ष या किसी अन्य सदस्य की हैसियत से या किसी अन्य राज्य या संयुक्त प्रशासनिक अधिकरणों के अध्यक्ष की हैसियत से नियुक्ति के लिए पात्र होगा। राज्य या संयुक्त प्रशासनिक अधिकरण का उपाध्यक्ष राज्य प्रशासनिक अधिकरण का अध्यक्ष या केंद्रीय प्रशासनिक अधिकरण या अन्य किसी राज्य या संयुक्त प्रशासनिक अधिकरण का अध्यक्ष/उपाध्यक्ष हो सकता है। किसी प्रशासनिक अधिकरण का सदस्य ऐसी ही प्रशासनिक अधिकरण का अध्यक्ष या उपाध्यक्ष की हैसियत से या अन्य किसी प्रशासनिक अधिकरण के अध्यक्ष, उपाध्यक्ष या किसी अन्य सदस्य की हैसियत से नियुक्ति के पात्र होंगे।

उपर्युक्त नियुक्तियों के अतिरिक्त, केंद्रीय या किसी राज्य प्रशासनिक अधिकरण का उपाध्यक्ष या सदस्य, भारत सरकार या किसी राज्य सरकार के अधीन किसी अन्य नियुक्ति के पात्र नहीं हो सकते।

अध्यक्ष, उपाध्यक्ष या अन्य सदस्य किसी ऐसी प्रशासनिक अधिकरण के सामने उपस्थित नही होंगे, काम नहीं करेंगे या वकालत नहीं करेंगे जिसके वे अध्यक्ष/उपाध्यक्ष/सदस्य रह चुके हों।

अध्यक्ष न्यायपीठों पर अपने उन वित्तीय और प्रशासनिक अधिकारों का उपयोग करेगा (या उन्हें प्रशासनिक अधिकरण के उपाध्यक्ष या किसी अन्य पदाधिकारी को ये अधिकार सौंप देगा) जो उसके पास औपचारिक रूप से हैं।

प्रशासनिक अधिकरण के अध्यक्ष, उपाध्यक्ष और सदस्यों के वेतन और भत्ते तथा सभी सेवानिवृत्ति लाभों सहित, सेवा के अन्य नियम शर्तें केंद्र सरकार द्वारा निर्धारित होंगी और उनमें उनकी नियुक्ति के बाद ऐसा कोई फेरबदल नहीं किया जा सकेगा जिससे उन्हें नुकसान हो।

प्रशासनिक अभिकरण अधिनियम 1985 में संशोधन करने के लिए 29 दिसंबर 2006 का प्रशासनिक अभिकरण (संशोधन) अधिनियम 2006 बना और अधिनियम में कुछ परिवर्तन किए गए। नया प्रावधान किया गया। इस प्रावधान के अनुसार, उच्च न्यायालय का सेवारत या सेवानिवृत न्यायाधीश ही अध्यक्ष पद पर चुना जाएगा, किंतु अधिनियम के प्रवर्तन से पूर्व यदि कोई व्यक्ति उपाध्यक्ष के पद पर नियुक्त कर लिया गया है तो अध्यक्ष पद पर नियुक्ति के लिए उसने उपाध्यक्ष के रूप में दो वर्श की अवधि के लिए काम किया होना चाहिए।

बोध प्रश्न 1

टिप्पणी: i) अपने उत्तरों के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ii) इकाई के अंत में दिए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

1) प्रशासनिक अधिकरण की स्थापना की आवश्यकता की व्याख्या कीजिए।

.....

.....

.....

.....

2) विभिन्न प्रकार के प्रशासनिक अधिकरण कौन–से हैं?

.....

.....

.....

.....

7.5 प्रशासनिक अधिकरण : अधिकार–क्षेत्र, शक्तियाँ और प्राधिकार

प्रशासनिक अधिकरण अधिनियम के अध्याय III में प्रशासनिक अधिकरणों के अधिकार–क्षेत्र, शक्तियों और प्राधिकार के विषय में उल्लेख किया गया है। इस अधिनियम की धारा 14(1) के अनुसार केंद्रीय प्रशासनिक अधिकरण भारत के संविधान के अनुच्छेद 136 के अनुसार भारत के उच्चतम न्यायालय को छोड़कर शेष सभी अदालतों द्वारा प्रयोग किए जाने वाले सभी अधिकार–क्षेत्र, शक्तियों और प्राधिकार का प्रयोग कर सकता है। यह बात संघ (केंद्र) या प्रतिरक्षा सेवा के अधीन सिविल पदों पर काम करने वालों पर या संघ की सिविल सेवाओं के सदस्यों पर या अखिल भारतीय सेवाओं के अधिकारियों की भर्ती और अन्य सेवा संबंधी मामलों पर लागू होती है। उच्चतम न्यायालय को छोड़कर, देश की किसी भी अन्य अदालत

को सेवा संबंधी विवादों में किसी क्षेत्राधिकार या प्राधिकार का इस्तेमाल करने का अधिकार नहीं है। यही प्राधिकार राज्य और संयुक्त प्रषासनिक अधिकरण को भी दिया गया है।

भारतीय संविधान की एक मुख्य विशेषता न्यायिक समीक्षा (Judicial Review) है। कानूनी और सांविधानिक अधिकारों को लागू करने के लिए अदालतों का एक सोपानिक ढाँचा है। कोई व्यक्ति एक अदालत के फैसले के खिलाफ दूसरी अदालत में अपील कर सकता है। उदाहरण के लिए, जिला न्यायालय से उच्च न्यायालय में और अंत में उच्चतम न्यायालय में अपील करना। लेकिन प्रशासनिक अधिकरणों का ऐसा कोई सोपानिक ढाँचा नही है और सेवा संबंधी मामलों के निपटारे के लिए संबंधित व्यक्ति केवल किसी एक प्रशासनिक अधिकरण के सामने ही जा सकता है। यह व्यवस्था फ्रांस की प्रशासनिक अदालतों की व्यवस्था से भिन्न है। फ्रांस में प्रशासनिक अदालतों का एक सोपानिक ढाँचा है और संबंधित व्यक्ति एक प्रशासनिक अदालत से दूसरी प्रशासनिक अदालत में अपील कर सकता है। लेकिन भारत में, प्रशासनिक अधिकरणों के फैसले को लेकर कोई व्यक्ति अपील अधिकरण में अपील नहीं कर सकता। यद्यपि अनुच्छेद 136 के तहत उच्चतम न्यायालय को प्रशासनिक अधिकरणों के फैसले पर क्षेत्राधिकार प्राप्त है, परंतु अधिकार के तौर पर कोई व्यक्ति उच्चतम न्यायालय में अपील नहीं कर सकता। यह उच्चतम न्यायालय के विवेक पर निर्भर करेगा कि वह अपील के लिए विशेष अनुमति दे या न दे।

प्रशासनिक अधिकरणों के पास रिट जारी करने का प्राधिकार है। मामलों को निपटाते समय, प्रशासनिक अधिकरण "नैसर्गिक न्याय" (Natural Justice) के अभिनियमों, सिद्धांतों और मानकों का पालन करता है। अधिनियम में यह उपबंध है कि "प्रषासनिक अधिकरण सिविल प्रक्रिया संहिता 1908 में निर्धारित प्रक्रिया से नहीं बंधेगा, बल्कि नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों से निर्देशित होगा। प्रशासनिक अधिकरण को अपनी प्रक्रिया को चलाने का अधिकार होगा जिसमें जाँच का स्थान और समय निर्धारित करना और यह फैसला करना शामिल है कि वह अपनी कार्यवाही सार्वजनिक रूप से करे या असार्वजनिक तौर पर।"

"स्वयं की अवमानना" (Contempt of Itself) के संबंध में अर्थात् अवमानना के लिए दंड देने के संबंध में, प्रशासनिक अधिकरण के पास उच्च न्यायालय जैसे ही अधिकार–क्षेत्र, शक्ति और प्राधिकार हैं। इस उद्देश्य को पूरा करने के लिए न्यायालय अवमानना अधिनियम 1971 के प्रावधानों को लागू करने की व्यवस्था है। इससे प्रशासनिक अधिकरणों को यह सुनिश्चित करने में मदद मिलती है कि उन्हें गंभीरता से लिया जाए और उनके आदेशों की अवहेलना न हो।

7.6 प्रशासनिक अधिकरणों में आवेदन की प्रक्रिया

प्रशासनिक अधिकरण अधिनियम में प्रशासनिक अधिकरणों में आवेदन करने की प्रक्रिया निर्धारित करता है। प्रशासनिक अधिकरण के अधिकार–क्षेत्र में आने वाले किसी भी मामले के बारे में किसी आदेश को लेकर यदि किसी व्यक्ति को कोई शिकायत है तो उसे निवारण करने के लिए प्रशासनिक अधिकरण से आवेदन कर सकता है। इस प्रकार के आवेदन निर्धारित प्रपत्र पर दिए जाने चाहिए। आवेदन के साथ आवश्यक कागजात और प्रमाणपत्र संलग्न होने चाहिए और केंद्र सरकार द्वारा निर्धारित शुल्क भी जमा करना चाहिए। लेकिन यह आवेदन शुल्क सौ रुपए से अधिक नहीं होगा। आम तौर पर प्रशासनिक अधिकरण किसी आवेदन को तब तक स्वीकार नहीं करेगा जब तक उसे यह संतुष्टि न हो जाए कि आवदेनकर्ता प्रासंगिक सेवा नियमों के तहत उपलब्ध सभी उपायों को आजमा चुका है। इन उपायों में कोई भी प्रशासनिक अपील करना या प्रतिवेदन शामिल है। चूँकि इस तरह की

अपीलों, प्रतिवेदनों पर विचार करने में विलंब होता है, इसलिए यदि अपील या प्रतिवेदन करने के बाद छह महीने बीत जाते हैं और इस संबंध में कोई आदेश जारी नहीं किया जाता तो आवेदनकर्ता प्रशासनिक अधिकरण में अपील कर सकता है। लेकिन आवेदन या अपील खारिज हो जाने का अंतिम आदेश मिलने के एक साल के अंदर प्रशासनिक अधिकरण में अपील की जानी चाहिए और अगर खारिज होने का अंतिम आदेश जारी नहीं हुआ है तो छह महीने की अवधि पूरी होने के पष्चात् एक साल के अंदर यह अपील प्रशासनिक अधिकरण में की जानी चाहिए। बहरहाल, अगर आवदेनकर्ता प्रशासनिक अधिकरण को इस बारे में संतुष्ट करा सके कि उसके पास सामान्य निर्धारित अवधि के अंदर आवेदन न कर पाने के पर्याप्त कारण हैं तो प्रशासनिक अधिकरण उसके आवेदन को एक साल के बाद भी स्वीकार कर सकता है।

प्रशासनिक अधिकरण हर आवेदन पर फैसला देने के लिए प्रलेखों, लिखित प्रतिवेदनों की जाँच करता है और कभी–कभी यदि किसी मामले में ऐसा आवश्यक हुआ तो मौखिक तर्क सुनने के बाद अपना फैसला देता है। आवेदनकर्ता या तो स्वयं (व्यक्तिगत रूप से) प्रशासनिक अधिकरण के सामने हाजिर हो सकता है या फिर किसी पेषेवर वकील द्वारा अपने मामले को वहाँ प्रस्तुत करवा सकता है। दोनों पक्ष प्रषासनिक अधिकरण के आदेष मानने को बाध्य हैं और अधिकरण के आदेष को आदेश में निर्धारित अवधि के अंदर मानना होगा, जहाँ आदेष में कोई अवधि निर्धारित नहीं की गई है वहाँ आदेष मिलने के छह महीने के अंदर उसका पालन करना होगा। कोई भी पक्ष संविधान के अनुच्छेद 136 के तहत प्रषासनिक अधिकरण के खिलाफ उच्चतम न्यायालय में अपील कर सकता है।

प्रशासनिक अधिकरण सिविल प्रक्रिया संहिता 1908 में उल्लिखित प्रक्रिया से नहीं बंधे हैं। वे नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों से निर्देषित होते है। चूँकि ये सिद्धांत लचीले और स्थिति के अनुसार सामंजस्य स्थापित करने वाले होते हैं, इसलिए वे प्रशासनिक अधिकरणों को किसी स्थिति विशेष के अनुसार अपनी प्रक्रिया को रूपांतरित करने में मदद देते हैं।

7.7 प्रशासनिक अधिकरणों के लाभ और उनकी सीमाएँ

किसी भी अन्य तरीके की तुलना में, प्रशासनिक अधिकरणों के माध्यम से प्रशासनिक न्याय प्राप्त करना आधुनिक समाज की विविध और पेचीदी आवश्यकताओं को ही अपेक्षाकृत अधिक उपयुक्त तरीके से पूरा करता है। यह उपयोगी और प्रभावी भी साबित हुआ है। प्रशासनिक अधिकरणों के कुछ लाभ हैं, जो इस प्रकार हैं:

उपयुक्त और प्रभावी न्याय : प्रशासनिक अधिकरण न केवल प्रशासनिक न्याय का सबसे उपयुक्त माध्यम हैं, बल्कि व्यक्तियों को निष्पक्ष न्याय प्रदान करने का प्रभावी माध्यम भी हैं। अब सरकारी सेवाओं में लगे कर्मचारी इस ओर से आश्वस्त रहते हैं कि अगर उन्हें न्याय नहीं मिला और उनके साथ कोई पक्षपात हुआ तो प्रशासनिक अधिकरण उन्हें वे लाभ प्रदान कराएँगे जिनपर उनका अधिकार बनता है।

लचीलापन : प्रशासनिक अधिकरणों के काम करने के ढंग से काफी लचीलापन और अनुकुलनशीलता होती है। नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत प्रशासनिक अधिकरणों के संचालन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। प्रशासनिक अधिकरण कानून के नियम के पिछले फैसलों की प्रक्रिया के कठोर नियमों से बंधे नहीं होते। प्राकृतिक न्याय के नियमों को स्थिति के अनुसार रूपांतरित किया जा सकता है। न्यायालय में मिलने वाला न्याय तो अत्यधिक प्राविधिक होता है, लेकिन प्रशासनिक अधिकरण कानून के तकनीकीपन से मुक्त होते हैं।

कम खर्चीला : खर्च की दृष्टि से देखें तो प्रशासनिक अधिकरणों से मिलने वाला न्याय सस्ता है। यह न्यायिक अदालतों की लंबी और बोझिल प्रक्रिया तथा वकील करने, अदालती शुल्क और अन्य प्रासंगिक खर्चों की तुलना में कम खर्चीला है। इसलिए अब, प्रशासनिक अधिकरण ऐसा लोकप्रिय न्यायिक मंच बन गया है जहाँ सरकारी कर्मचारी आसानी से पहुँच सकते हैं, और यहाँ तक कि उन्हें नौकरी के छोटे–छोटे मामलों में प्रशासनिक अधिकरण में जाने को बढ़ावा मिलता है।

न्यायालयों को राहत : प्रशासनिक अधिकरणों से उन न्यायिक अदालतों को भी राहत मिली है जिनके पास दीवानी, फौजदारी और सांविधानिक मामलों की याचिकाओं की भरमार से वैसे ही व्यस्तता रहती है।

इन लाभों के बावजूद प्रशासनिक अधिकरणों की कार्य प्रणाली की कुछ सीमाएँ भी हैं जो इस प्रकार हैं:

i) प्रशासनिक अधिकरण एकसमान पूर्व निर्णयों पर निर्भर नहीं रहते, इसलिए वे मनमाने और परस्पर विरोधी फैसले ले सकते हैं।

ii) प्रशासनिक अधिकरणों का कोई सोपानिक ढाँचा न होने से सेवा के मामलों में न्यायिक पुनर्विलोकन की कोई गुंजाइश नहीं होती।

iii) प्रशासनिक अधिकरणों के अधिकारी प्रशासनिक सदस्य और तकनीकी व्यक्ति होते हैं जिनके पास कानून या न्यायिक काम का कोई पिछला अनुभव नहीं भी हो सकता है।

iv) जैसा कि पहले बताया जा चुका है, प्रशासनिक अधिकरणों के पास रिट जारी करने का अधिकार होता है, जो अभी तक संविधान के तहत केवल उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालय के पास था।

v) वर्तमान प्रशासनिक अधिकरणों में एक और कमी संरचनात्मक–कार्यात्मक दृष्टि से है। यह कमी है – प्रशासनिक अधिकरण की संरचना में किसी अपील मंच का न होना। इस कारण काफी असुविधा होती है। उदाहरण के तौर पर, अगर केंद्रीय प्रशासनिक अधिकरण की कोई पीठ कोई फैसला दे देती है, तो यह फैसला पूरे देश में लागू होता है, क्योंकि पूरे भारत के लिए केवल एक ही केंद्रीय प्रशासनिक अधिकरण है और देश के विभिन्न भागों में स्थित विभिन्न न्यायपीठें उसी प्रशासनिक अधिकरण का हिस्सा–भर हैं। अगर प्रशासनिक अधिकरण व्यवस्था के भीतर कोई अपील का स्थान भी होता जहाँ असंतोषजनक निर्णय के खिलाफ अपीलें की जा सकतीं तो यह सरकारी कर्मचारियों और सरकार दोनों के लिए न्याय पाने का एक वांछित तरीका होता।

बोध प्रश्न 2

टिप्पणी: i) अपने उत्तरों के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ii) इकाई के अंत में दिए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

1) किसी शिकायत के निवारण के लिए प्रशासनिक अधिकरण में मामला ले जाने हेतु आवेदन करने की प्रक्रिया पर चर्चा कीजिए।

.....

.....

.....

.....

2) प्रशासनिक अधिकरणों की सीमाएँ कौन–सी हैं?

.....

.....

.....

.....

7.8 निष्कर्ष

प्रशासनिक अधिकरणों की संख्या लगातार बढ़ रही है। यह प्रणाली उपयोगी और प्रभावी सिद्ध हुई है। इससे न केवल सामान्य न्यायालयों को राहत मिलती है बल्कि कर्मचारियों के सेवा संबंधी मामलों में उनके लिए शीघ्र और सस्ता न्याय भी सुनिश्चित होता है। प्रशासनिक अधिकरणों के कई ऐसे लाभ हैं जो सामान्य न्यायालयों के पास नहीं होते। उदाहरण के लिए मुकदमा लड़ने में कम खर्च, सुगम्यता, तकनीकीपन से मुक्ति, तुलनात्मक रूप से अधिक लचीलापन, मामले का शीघ्र निपटारा और विशिष्ट क्षेत्र की विशेषज्ञ जानकारी।

इन लाभों के बावजूद दो ऐसे महत्वपूर्ण कारक हैं जो उनके प्रभावी ढंग से काम करने में समस्या खड़ी करते हैं। पहला, उनमें आम तौर पर न्यायिक क्षेत्र के प्रशिक्षित और अनुभवी व्यक्ति नहीं होते, जो प्रशासनिक कार्रवाई की पर्याप्त समीक्षा करने के लिए महत्वपूर्ण है। दूसरा कारण यह कहा जाता है कि लोक अदालतों में काम करने वाले अधिकारियों में आम तौर पर निष्पक्ष दृष्टिकोण और तटस्थता नहीं होती जो कि न्यायिक अधिकारियों में होती है।

इस तरह, "न्याय की गुणवत्ता" को बनाए रखने के लिए यह अत्यावश्यक है कि प्रशासनिक अधिकरणों के ऊपर न्यायिक छत्रछाया हो। इसलिए इस बात की जरूरत है कि प्रशासनिक अधिकरणों में अधिकाधिक न्यायिक पृयठभूमि के व्यक्ति लिए जाएँ। इसके साथ–साथ, न्यायालयों में भी प्रशासनिक व्यक्तियों के प्रति सहानुभूति और परस्पर तालमेल होना चाहिए जिससे अप्रिय विशेषताओं को समाप्त किया जा सके।

इस इकाई में, आपने प्रशासनिक अधिकरणों के विकास के बारे में पढ़ा। सरकारी नौकरी में लगे कार्मिकों के सेवा या नौकरी संबंधी विवादों का निपटारा करना इन प्रशासनिक अभिकरणों का उद्देश्य है। इस इकाई में आपको विभिन्न प्रकार के अधिकरणों, उनके ढाँचे, गठन, अधिकार–क्षेत्र, शक्तियों और प्राधिकार की जानकारी मिली। इसमें प्रशासनिक अधिकरणों में आवेदन करने के तरीके का भी उल्लेख किया गया और इन अधिकरणों के लाभों एवं उनकी सीमाओं के बारे में भी चर्चा की गई।

7.9 शब्दावली

न्यायपीठ / बार (Bench/Bar) : पारंपरिक तौर पर न्यायपीठ न्यायाधीशों का प्रतीक होती है और बार वकीलों या अधिवक्ताओं का प्रतिनिधित्व करती है।

रिट (Writ) : यह एक कानूनी प्रलेख होता है जो किसी व्यक्ति विशेष को कोई काम विशेष करने या न करने का आदेश देता है।

7.10 संदर्भ लेख

Basu D.D. 1986, *Administrative Law (2nd Ed),* Prentice Hall of India, New Delhi.

Gupta, Balaram K., July-September 1985, A*dministrative Tribunals and Administrative Justice (*A review of the A*dministrative Tribunals Act, 1985) Indian Journal of Public Administration Special Number on Administrative Reforms-Revisited,* IIPA, New Delhi.

Jain, P.C. 1981, A*dministrative Adjudication – A Comparative Study of France, U.K., U.S.A. and India*, Sterling Publishers Pvt. Ltd., New Delhi.

Maheshwari, Shriram, 1990, *Indian Administration,* Orient Longman, New Delhi.

Nayak, Radhakant, 1989, A*dministrative Justice in India,* Sage Publications, New Delhi.

Saxena, Hari Sharan, 1996, *Central Administrative Tribunal (CAT) Redress against Administrative Wrongs*, Deep and Deep Publications, New Delhi.

7.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) आपके उत्तर में निम्नलिखित बातें शामिल होनी चाहिए:

- कर्मचारियों की सेवा संबंधी शिकायतों पर विचार कर उन्हें शीघ्र और सस्ती राहत देना।
- न्यायिक अदालतें अपनी अतिव्यस्तता, लंबित और ढेरों विचाराधीन मामलों, खर्च और लंबे समय तक चलने के कारण सरकारी कर्मचारियों को अपेक्षित न्याय नहीं दे सकती।

2) आपके उत्तर में निम्नलिखित बातें शामिल होनी चाहिए:

- केंद्रीय प्रशासनिक अधिकरण
- राज्य प्रशासनिक अधिकरण
- संयुक्त प्रशासनिक अधिकरण

बोध प्रश्न 2

1) आपके उत्तर में निम्नलिखित बातें शामिल होनी चाहिए:

- आवेदनपत्र निर्धारित प्रपत्र पर, प्रासंगिक दस्तावेजों, प्रमाणपत्रों और निर्धारित शुल्क के साथ दिया जाना चाहिए।
- प्रशासनिक अधिकरण इस संतुष्टि के बाद किसी आवेदनपत्र को स्वीकार कर

सकती है कि आवेदनकर्ता सेवा नियमों के तहत उपलब्ध सभी उपायों को आजमा चुका है।

2) आपके उत्तर में निम्नलिखित बातें शामिल होनी चाहिए:

- मनमाने और परस्पर विरोधी (असंगत) फैसले।
- सेवा मामलों पर न्यायिक समीक्षा की गुंजाइश का न होना।
- सदस्यों में कानून और न्यायिक काम का अनुभव न होना।
- सामान्य न्यायालयों और प्रशासनिक अधिकरणों के बीच रिट जारी करने में प्राधिकार के सहभाजन के बारे में किसी स्पष्ट प्रावधान का न होना।
- प्रशासनिक अधिकरण में किसी अपील मंच का न होना।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY